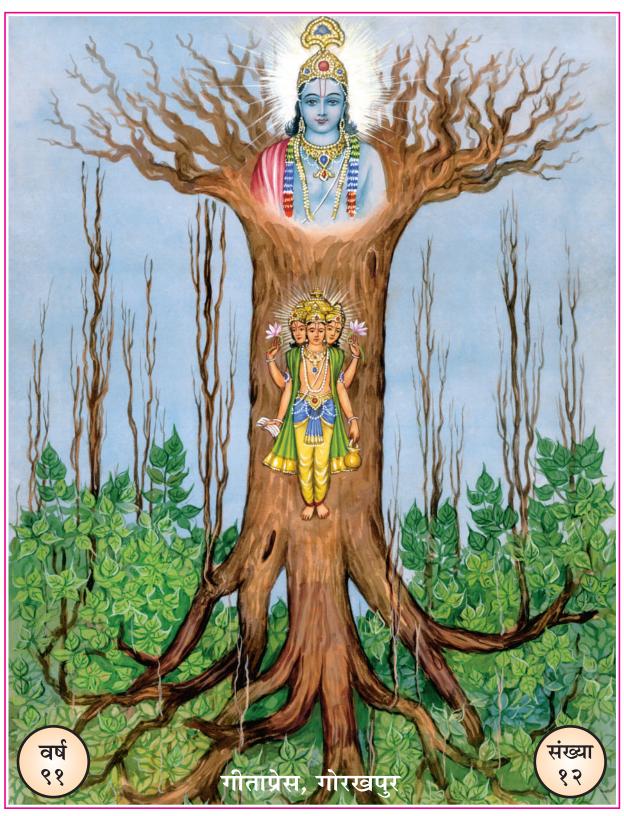
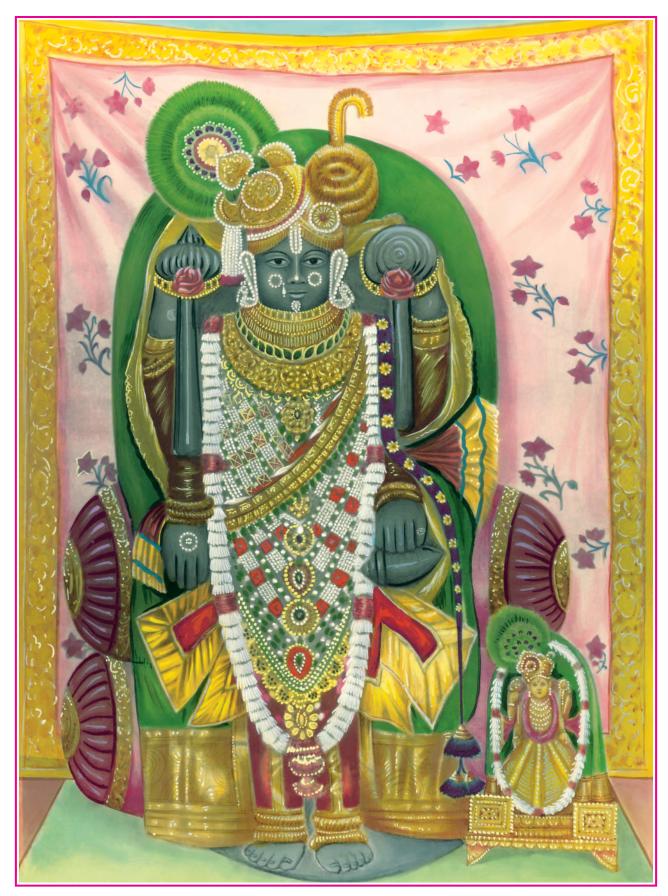
किल्या ण







भगवान् श्रीद्वारकानाथजी

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥



वन्दे वन्दनतुष्टमानसमितप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्येकवासं शिवम्। सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मनुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम्॥

वर्ष ९१ गोरखपुर, सौर पौष, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, दिसम्बर २०१७ ई० पूर्ण संख्या १०९३

श्रीद्वारकानाथजीकी वन्दना

शङ्खं प्रसारितसुखं स्वपदाश्रितानां चक्रं सदा दिमतदानवदैत्यचक्रम्। कौमोदकीं भुवनमोदकरीं गदाग्र्यां पद्मालयाप्रियकरं प्रथितं च पद्मम्।। संधारयन्तमितचारुचतुर्भुजेषु श्रीवत्सकौस्तुभधरं वनमालयाढ्यम्। सिन्धोस्तटे मुकुटकुण्डलमण्डितास्यं श्रीद्वारकेशमिनशं शरणं प्रपद्ये॥

जो अपने चरणाश्रित भक्तोंके लिये सुखका प्रसार करनेवाले शंखको, सदा दैत्यों और दानवोंके दलका दमन करनेवाले चक्रको, सम्पूर्ण भुवनोंको आनन्द प्रदान करनेवाली कौमोदकी नामक श्रेष्ठ गदाको तथा पद्मालया (लक्ष्मीस्वरूपा रुक्मिणी)-का प्रिय करनेवाले प्रख्यात पद्म-पुष्पको अपनी अत्यन्त

मनोहर चार भुजाओंमें धारण किये रहते हैं, जिन्होंने अपने वक्ष:स्थलपर श्रीवत्सका चिह्न तथा कौस्तुभ-मणि धारण कर रखी है, जो वनमालासे विभूषित हैं तथा जिनका मुखमण्डल किरीट और कुण्डलोंसे अलंकृत है; उन सिन्धु-तटवर्ती श्रीद्वारकानाथजीकी मैं निरन्तर शरण ग्रहण करता हूँ।

्रारापृत्त ७, ७ । १२. चु राज्यसा आद्वारयमा गयाया १ । १२. स्वर्त स्थार प्राप्त कृत 'श्रीद्वारकेशाष्टक'से] [पं० श्रीरामनारायणदत्तजी शास्त्री 'राम' कृत 'श्रीद्वारकेशाष्टक'से]

कल्याण, सौर पौष, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, दिसम्बर २०१७ ई०		
<u>/</u> विषय-सूची		
विषय पृष्ठ-संख्या	विषय पृष्ठ-संख्या	
१ - श्रीद्वारकानाथजीकी वन्दना	१४- 'प्रणव' की उपासना (डॉ० श्री के० डी० शर्माजी)	
	•	
१ - संसार-वृक्ष (रंगीन) आवरण-पृष्ठ २ - भगवान् श्रीद्वारकानाथजी (''') मुख-पृष्ठ ३ - संसार-वृक्ष (इकरंगा) ६ ४ - विभीषण-शरणागित (''') २६	५- वेणुवादन२७ ६- श्रीरामकी गोदमें जटायु(")३३ ७- वासवदत्ताको धर्मोपदेश देते भिक्षु	
जिय पावक रवि चन्द्र जयित जय	। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥	
सन् २०१८ के लिये शुल्क एकवर्षीय ₹२५० पंचवर्षीय ₹१५० पंचवर्षीय ₹१२५० सजिल्द शुल्क वार्षिक US\$ 50 (₹3000) सजिल्द शुल्क पंचवर्षीय US\$ 250 (₹15,000) (Charges 6\$ Extra		
सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सह	भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़ लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित	
	an@gitapress.org 09235400242/244	
सदस्यता-शुल्क —व्यवस्थापक — 'कल्याण-कार्यालय Online सदस्यता-शुल्क -भुगतानहेतु-gitapress.org पर	a', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें। Online Magazine Subscription option को click करें yan-gitapress.org पर नि:शुल्क पढ़ें।	

संख्या १२] कल्याण कल्याण याद रखो-भगवान् अकारण सुहृद् हैं और और अपमान करो; भगवान्के सहज प्यारमें कभी परम करुणामय हैं: वे यह नहीं सोचते कि जीव कोई अन्तर नहीं पड़ता। तुम्ही जबतक मुख मोड़े सब दोषोंसे रहित होकर, परम विशुद्ध होकर मेरी रहोगे, तबतक उनके मधुर मुसकानभरे स्नेहपूर्ण शरणमें आयेगा, तभी उसे आश्रय मिलेगा। वे वदनारविन्दकी झाँकीसे वंचित रहोगे, उनके स्नेह-देखते हैं, केवल एक बात—जीव मुझको ही सुधा-सागरमें अवगाहनका सौभाग्य नहीं पा सकोगे। अनन्य गति समझकर मेरी शरणमें आना चाहता इसमें चाहे कितना ही समय बीते: पर याद

है या नहीं। यदि सचमुच चाहता है तो वह फिर

चाहे जैसा भी पापी-तापी, दुराचारी-दु:खभारी, पतित-पीड़ित हो, भगवान् उसे अपना अभय

आश्रय देते ही हैं। *याद रखो*—भगवानुका दरबार सबके लिये सदा खुला रहता है, जो भी वहाँ जाना चाहता है,

सचमुच जाना चाहता है—उसीको जाने दिया जाता है और एक बार वहाँ पहुँच गया कि फिर उसके पाप-ताप, दुराचार-दु:ख, पतन-पीड़ा सदाके लिये

समूल नष्ट हो जाते हैं।

याद रखो—भगवान्के समान तुम्हारा अपना,

सदा साथ देनेवाला आत्मीय, कभी किसी भी स्थितिमें घृणा न करनेवाला स्वामी और मित्र दुसरा

कोई न है, न कभी हुआ है और न होगा। जिसको जगत्में कहीं भी स्थान नहीं मिलता, जो जगत्की दुष्टिमें सर्वथा नगण्य, तुच्छ, उपेक्षित और घृणित है,

जिसको कहीं कोई भी अपना कहनेवाला तो है ही नहीं, दयाकी प्रेरणासे भी जिसकी ओर सुदृष्टिसे ताकनेवाला कोई नहीं है, उसको भी भगवान उतना ही प्यार करते हैं, जितना किसी भी दुसरेको।

याद रखो-तुम कितना ही अपराध करो, कितना ही धोखा दो. कितना ही उनका तिरस्कार

है। जैसे स्नेहमयी जननीका वक्ष:स्थल शिशुके

उसके समान अभागा और कोई नहीं है। सारे पाप-

रखो—जिस क्षण तुमने उनकी ओर मुख मोडा, तुम देखोगे कि तुम्हारे किसी अपराधका, किसी धोखेका और तुम्हारे द्वारा किये हुए किसी तिरस्कार या अपमानका उन्हें मानो स्मरण ही नहीं

लिये सदा ही खुला रहता है, वैसे ही वे तुम्हें बड़े प्यारसे अपने हृदयसे चिपटानेको तैयार मिलेंगे। *याद रखो*—इतनेपर भी जो जीव उनकी ओरसे मुख मोडे रहनेमें ही अपना गौरव मानता है,

ताप सदा उसके लिये मुँह बाये खडे रहते हैं और वह अपने जीवनमें किसी भी स्थितिमें कभी भी सच्ची सख-शान्तिका साक्षात्कार नहीं कर सकता। याद रखो-मनुष्य जगत्में विषयोंकी दृष्टिसे

चाहे जितना सौभाग्यवान् समझा जाय और जगत्में उसकी मान-प्रतिष्ठा तथा प्रशंसा-कीर्तिके चाहे जितने पुल बाँधे जायँ, असलमें वह बडा ही भाग्यहीन और निष्फल-जीवन है। मानव-जीवनकी सफलता भोगोंकी अधिकतामें नहीं है, वह तो प्रभुकी शरणागतिमें ही है।

सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं बिषय अनुरागी॥ 'शिव'

आवरणचित्र-संसार-वृक्ष

परिचय—

श्रीरामावतारमें भगवान् श्रीरामके राज्याभिषेकके

समय सब देवताओंद्वारा स्तुति करके अपने-अपने धाम चले जानेपर चारों वेद बन्दीजनोंके वेशमें आकर परब्रह्म परमात्मा श्रीरामकी स्तुति करते हुए कहते हैं कि हे प्रभृ! आप ही इस संसाररूपी वृक्षके रूपमें प्रकट हैं—

चारि

निगमागम

षट कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने॥ फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे। पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे॥

त्वच

अब्यक्तमुलमनादि तरु

वेदशास्त्रोंने कहा-जिसका मूल अव्यक्त (प्रकृति)

है; जो प्रवाहरूपसे अनादि है; इसकी चार त्वचाएँ, छ:

तने, पच्चीस शाखाएँ, अनेकों पत्ते और बहुत-से फूल

हैं, जिसमें कडवे और मीठे दो प्रकारके फल लगे हैं; जिसपर एक ही बेल है, जो उसीके आश्रित रहती है;

जिसमें नित्य नये पत्ते और फूल निकलते रहते हैं; ऐसे

संसारवृक्ष-स्वरूप (विश्वरूपमें प्रकट) आपको हम

नमस्कार करते हैं। इस संसार-वृक्षके विषयमें गीतामें भगवान् श्रीकृष्ण

उर्ध्वमूलमध: शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्। छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्॥ अर्थात् आदिपुरुष परमेश्वररूप मूलवाले और ब्रह्मारूप

मुख्य शाखावाले जिस संसाररूप पीपलके वृक्षको अविनाशी कहते हैं तथा वेद जिसके पत्ते कहे गये हैं - उस संसाररूप वृक्षको जो पुरुष मूलसहित तत्त्वसे जानता है,

वह वेदके तात्पर्यको जाननेवाला है। यह संसार अश्वत्थ-पीपल वृक्षके समान है।

अश्वत्थ भगवान्की विभूति है, अत: प्रणम्य है। संसार भी 'वासुदेव: सर्वम्' के भावसे प्रणम्य है। परंतु

अश्वत्थका एक तात्पर्य 'चल-दल' भी है अर्थात् उसके पत्ते एक क्षण भी स्थिर नहीं रहते, उसी प्रकार संसार भी अनित्य और नाशवान् है। यह संसार-वृक्ष

बड़ा विचित्र है, इसका मूल ऊपर तथा शाखाएँ नीचेकी ओर हैं। वस्तुत: इस संसार-वृक्षकी उत्पत्ति और इसका विस्तार आदिपुरुष नारायणसे हुआ है, जो सर्वव्यापक होते हुए भी सगुणरूपसे सबसे ऊपर

ही समय ब्रह्माका उद्भव होता है, इस कारण ब्रह्मा ही इसकी प्रधान शाखा हैं। ब्रह्माका लोक आदिपुरुष नारायणके नित्यधामकी अपेक्षा नीचे है, इसलिये इस

नित्यधाममें निवास करते हैं। संसार-वृक्षकी उत्पत्तिके

संसार-वृक्षको नीचेकी ओर शाखावाला कहा गया है। यह संसार-वृक्ष परिवर्तनशील होनेसे नाशवान् है, परंत् इसका प्रवाह नारायणसे है, अत: यह अनादि और अव्यय भी है। वेद इस संसार-वृक्षके पत्ते हैं, जो

ब्रह्माजीरूपी मुख्य शाखासे प्रकट हैं। जिस प्रकार पत्ते

वृक्षकी रक्षा और वृद्धि करनेवाले होते हैं, वैसे ही वेद-विहित कर्मोंसे संसारकी वृद्धि और रक्षा होती है, सर्वशक्तिमान् परमेश्वरकी मायासे उत्पन्न यह संसार भी

वृक्षकी भाँति उत्पत्ति-विनाशशील और क्षणिक है, अतएव इसकी चमक-दमकमें न फँसकर इसको उत्पन्न

करनेवाले मायापित परमेश्वरकी शरणमें जाना चाहिये: क्योंकि भगवानुकी शरणमें जाना ही सम्पूर्ण वेदोंका

अर्थ और रहस्यका भेद संख्या १२] अर्थ और रहस्यका भेद [श्रीमद्भगवद्गीताके एक श्लोकका रहस्य] (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) अस्वीकार करते हुए कहा—'राजन्! आप बड़े उदार हैं, एक बहुत ही सन्तोषी, सदाचारी और विद्वान् ब्राह्मण थे, किंतु थे वे निर्धन। उनकी पत्नी बड़ी पतिव्रता, यह मैं जानता हूँ। परंतु मेरा एक नियम है, मैं किसीका विदुषी, तत्त्वज्ञानसे सम्पन्न और जीवन्मुक्त थी। उस उपकार किये बिना उससे अयाचितरूपमें भी धन नहीं देशके राजा भी तत्त्वज्ञानी, जीवन्मुक्त महात्मा थे। लेता। आप मुझे कोई काम सौंपें और उससे मैं आपका ब्राह्मणपत्नीने एक दिन विचार किया—मेरे पतिदेव सन्तोष करा सकूँ, तो उसके बाद आप यदि कुछ दें तो सन्तोषी, सदाचारी और विद्वान् हैं, इसलिये वे मुक्तिके वह लिया जा सकता है।' राजाने कहा—'पण्डितजी! अधिकारी तो हैं ही, इनकी यदि हमारे जीवन्मुक्त राजासे बहुत अच्छा। आप सदाचारी विद्वान् ब्राह्मण हैं। मैं भेंट हो जाय तो ये भी शीघ्र तत्त्वज्ञानी—जीवन्मुक्त हो आपसे गीताका रहस्य सुनना चाहता हूँ। मुझे आप सकते हैं। यह सोचकर उसने पतिसे प्रार्थना की— कुपापूर्वक गीताके बारहवें अध्यायके सोलहवें श्लोकका 'पतिदेव! आजकल अपने शरीरनिर्वाहके लिये बडी ही भावसहित स्पष्ट अर्थ समझाइये।' तंगी हो गयी है और आयका कोई भी रास्ता नहीं पण्डितजीने पहले श्लोक पढा, फिर उसका शब्दार्थ दीखता। सुना जाता है, यहाँके राजा बड़े सदाचारी, बतलाया— जीवन्मुक्त महात्मा हैं तथा ब्राह्मणोंका आदर-सत्कार अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः। करनेवाले एवं परम उदार हैं, आप उनसे एक बार मिल सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥ लें तो वे आपका उचित सत्कार कर सकते हैं और 'जो पुरुष आकांक्षासे रहित, बाहर-भीतरसे शुद्ध, शास्त्रविधिके अनुसार यदि राजा बिना याचना किये ही चतुर, पक्षपातसे रहित और दु:खोंसे छूटा हुआ है, वह सब आरम्भोंका त्यागी मेरा भक्त मुझको प्रिय है।' कुछ दे तो वह ब्राह्मणके लिये अमृतके समान है। यह तदनन्तर वे श्लोकका भावार्थ इस प्रकार बतलाने आप जानते ही हैं।' पण्डितजीने कहा — 'तुम्हारा कहना ठीक है; लगे— जिसे किसी भी प्रकारकी इच्छा, स्पृहा और

परंतु मैं जबतक किसीका कोई उपकार न कर दूँ, तबतक अयाचक वृत्तिसे भी-बिना माँगे उससे दान लेकर

जीवन-निर्वाह करना निन्दास्पद समझता हूँ; अतएव मैं ऐसा नहीं करूँगा, चाहे मुझे भूखों ही रहना पड़े।'

ब्राह्मणपत्नी बोली—'आप विद्वान् हैं, राजाको यथोचित उपदेश देकर उनका उपकार कर सकते हैं।' यह बात पण्डितजीको कुछ रुची, पर उनका मन राजाके

पास जानेका नहीं होता था। अन्तमें पत्नीके बहुत कहनेपर वे राजी हो गये और राजसभामें चले गये। पण्डितजीके सद्गुण और सदाचरणोंकी ख्याति देशभरमें फैली हुई थी। राजाने पण्डितजीका बड़ा आदर-सत्कार हो; जिसके दर्शन, भाषण, स्पर्श और वार्तालापसे ही लोग पवित्र हो जायँ, वह 'शुचि' है। जिस महान् कार्यके लिये मनुष्य-शरीर मिला है, उसे प्राप्त कर लेना अर्थात् भगवान्को प्राप्त कर लेना ही मनुष्यकी यथार्थ 'दक्षता' है; जो अपना काम बना

बाहरका व्यवहार भी उद्वेगरहित, पवित्र और न्याययुक्त

कामना न हो, जो आप्तकाम हो एवं जिसे किसी बातकी

जिसका अन्त:करण अत्यन्त पवित्र हो, जिसका

भी परवा न हो, उसे 'अनपेक्ष' कहते हैं।

लेता है, वही 'दक्ष' कहलाता है। किया। कुशलक्षेम-प्रश्नोत्तरके अनन्तर राजाने बहुत-सी जो गवाही देते समय और न्याय या पंचायत करते स्वर्णमुद्राएँ मँगाकर पण्डितजीको भेंट कीं। पण्डितजीने समय कुटुम्बी, मित्र, बन्धु, आदिकी दृष्टिसे या राग, द्वेष,

भाग ९१ लोभ, मोह एवं भय आदिके वश होकर किसीका भी भेंट स्वीकार नहीं की और वे घर लौट आये। उधर पक्षपात नहीं करता—सदा सर्वथा पक्षपातरहित रहता है. राजाने एक विश्वासपात्र गुप्तचरको बुलाकर कहा—'ये ब्राह्मणदेवता बड़े त्यागी, सदाचारी और स्वाभिमानी उसे 'उदासीन' कहते हैं। किसी भी प्रकारके भारी-से-भारी दु:ख अथवा विद्वान् हैं। तुम इनके पीछे जाकर देखो, घरपर इनका दु:खके हेतु प्राप्त होनेपर भी जो दुखी नहीं होता अर्थात् कैसा-क्या व्यवहार और वार्तालाप होता है और फिर जिसके अन्त:करणमें कभी किसी तरहका विषाद, दु:ख उसकी सूचना मुझे दो।' राजाका आदेश पाकर गुप्तचर या शोक नहीं होता, वही 'गतव्यथ' है। उनके पीछे हो लिया और उनका सब व्यवहार-जो बाहर-भीतरके समस्त कर्मोंका त्यागकर केवल वार्तालाप देखता रहा। पण्डितजीने घर लौटकर पत्नीके पूछनेपर राजसभाकी प्रारब्धपर ही निर्भर रहता है, अपने स्वार्थकी सिद्धिके लिये कुछ भी कर्म नहीं करता; अपने-आप जो कुछ सारी कथा आद्योपान्त उसे सुना दी। पत्नीने विनय और प्राप्त हो जाय, उसीमें सन्तुष्ट रहता है तथा प्रारब्धवश प्रेमसे कहा—'स्वामिन्! राजाने जो कुछ कहा वह तो होनेवाली क्रियाओंमें जिसके कर्तापनका अभिमान नहीं उचित ही मालूम होता है। आपको नाराज नहीं होना है, ऐसे बाहर और भीतरके त्यागीको 'सर्वारम्भपरित्यागी' चाहिये था।' कहते हैं। पण्डितजी—(कुछ क्रोधावेशमें आकर तथा पण्डितजीके उपर्युक्त भावार्थ बतला चुकनेपर राजाने व्यथित-से होकर) वाह! तुम भी राजाकी ही बातका नम्रतासे कहा—'महाराजजी! आपने बड़ा सुन्दर अर्थ समर्थन करती हो! किया। आपका कथन सर्वथा युक्तियुक्त और शास्त्र-पत्नी-नाथ! आप ही तो कहा करते हैं कि संगत है। तथापि मेरा ऐसा अनुमान है कि श्लोकोंका न्याययुक्त बातका समर्थन करना चाहिये। बहुत सुन्दर अर्थ करनेपर भी आप अभी इसके रहस्यसे पण्डितजी—(कुछ और भी उत्तेजनासे, परंतु उसे अनभिज्ञ हैं।' पण्डितजी झुँझलाकर बोले—'रहस्य न दबाते हुए) क्या राजाका यह कहना न्याययुक्त है कि जानता होता तो भावसहित अर्थ कैसे बतला सकता? मेरी व्याख्या तो सुन्दर है, पर मैं इसके रहस्यको नहीं मुझे गीताकी बावन टीकाएँ कण्ठस्थ हैं। इसके अतिरिक्त समझता? कोई विशेष रहस्य हो और उसे आप जानते हों तो आप पत्नी—नाथ! आप क्षमा करें। राजाकी बात तो ही बतलाइये।' बहुत ठीक है। किसी श्लोककी व्याख्या करना सहज राजाने इसका उत्तर न देकर बड़ी विनम्र वाणीमें है, पर उसका यथार्थ रहस्य जानना बहुत ही दुर्लभ है। कहा—'पण्डितजी! मुझे आपकी शास्त्रसम्मत सुन्दर पण्डितजी — कैसे ? व्याख्यासे बडा सन्तोष हुआ है; मैं आपका बहुत पत्नी — जैसे ग्रामोफोनपर जो चूड़ी चढ़ा दी जाती आभारी हूँ। अतः मेरी दी हुई भेंट आप कृपया स्वीकार है, वह वही गाना गा देता है, पर उसके रहस्यको वह कीजिये।' थोडे ही समझता है। पण्डितजीने कहा—'राजन्! जब आप मेरे लिये पण्डितजी—तो क्या मैं ग्रामोफोनकी तरह हूँ? यह कहते हैं कि मैं रहस्यसे अनिभज्ञ हूँ, तब सन्तोषकी पत्नी - जो पुरुष दूसरोंको उपदेश-आदेश तो बात कहाँ रही ? यह तो कहनेभरका सन्तोष है। आपको बडा सुन्दर करता हो, किंतु स्वयं उसमें वे बातें चरितार्थ न होती हों तो आप ही बतलाइये, ग्रामोफोनमें और उसमें जबतक वास्तवमें सन्तोष न हो जाय, तबतक आपसे कुछ भी लेना नहीं चाहता।' क्या अन्तर है ? राजाके पूछनेपर आपने श्लोककी जो राजाके बहुत अनुनय-विनय करनेपर भी पण्डितजीने व्याख्या की, क्या वे सारी बातें आपमें चरितार्थ होती हैं?

संख्या १२] अर्थ और रह	इस्यका भेद ९
<u> </u>	**************************************
पण्डितजी —क्यों नहीं? कौन-सी बात मुझमें	पत्नी —तो क्या आप जिस महान् कार्यके लिये
नहीं है ?	संसारमें आये थे, उसे पूरा कर चुके? क्या आपने
पत्नी —आप शान्तिसे मेरा निवेदन सुनिये। मेरी	परमपदको प्राप्त कर लिया? नहीं तो, फिर राजाका
प्रार्थना है—आप उस श्लोकके प्रत्येक पदका अर्थ पुन:	कहना उचित ही है।
मुझे बतलाइये। 'अनपेक्ष' का क्या भाव है?	पण्डितजी —तुम्हारा कथन सत्य है। मुझमें यह
पण्डितजी —जिसे किसी भी प्रकारकी इच्छा,	गुण भी नहीं है।
स्पृहा और कामना न हो, जो आप्तकाम हो एवं जिसे	पत्नी—' उदासीन' पदका क्या अभिप्राय है?
किसी बातकी परवाह न हो, उसे 'अनपेक्ष' कहते हैं।	पण्डितजी —जो गवाही देते समय, न्याय या
पत्नी —क्या आप ऐसे हैं?	पंचायत करते समय कुटुम्बी, मित्र, बन्धु आदिकी दृष्टिसे
पण्डितजी—क्यों नहीं ? मुझे तो कोई भी इच्छा,	या राग, द्वेष, लोभ, मोह एवं भय आदिके वश होकर
स्पृहा और कामना नहीं है। मैं तो तुम्हारे ही अनुरोध	किसीका भी पक्षपात नहीं करता—सदा-सर्वथा पक्षपात-
करनेपर राजाके पास गया था। और राजाके अनुनय–	रहित रहता है, उसे 'उदासीन' कहते हैं।
विनय करनेपर भी मैंने उनसे कुछ भी नहीं लिया।	पत्नी —क्या आप पक्षपातरहित हैं? क्या आपने
पत्नी —बहुत अच्छा! सत्य है, आप मेरे ही	राजाके सम्मुख अपने पक्षका समर्थन नहीं किया? क्या
आग्रहसे गये थे। यह आपकी मुझपर दया है। अच्छा	आपने राजाके इस कथनपर कि आप श्लोकके रहस्यको
'शुचि' का क्या अभिप्राय है?	नहीं समझते, गम्भीरतापूर्वक ध्यान दिया? नहीं तो, फिर
पण्डितजी—जिसका अन्त:करण अत्यन्त पवित्र	राजाका कहना कैसे उचित नहीं है?
हो, जिसका बाहरका व्यवहार भी उद्वेगरहित, पवित्र	पण्डितजी —(सरल और शुद्ध हृदयसे अपनी
और न्याययुक्त हो; जिसके दर्शन, भाषण, स्पर्श और	कमीको विनम्र भावसे स्वीकार करते हुए) तुम सच
वार्तालापसे ही लोग पवित्र हो जायँ, वह 'शुचि' है।	कहती हो। सचमुच तुमने आज मेरी आँखें खोल दीं।
पत्नी —क्या आप बाहर-भीतरसे इस प्रकार शुद्ध	पक्षपातरहित होनेका तो मुझमें बड़ा अभाव है।
हैं ? क्या आपके दर्शन, भाषण, स्पर्श और वार्तालाप	कहीं वाद-विवाद होता है तो मैं अपने पक्षको दुर्बल
करनेसे मनुष्य पवित्र हो जाता है? क्या आपके	जानकर भी अपने पक्षके दुराग्रहको नहीं छोड़ता।
अन्त:करणमें कोई विकार नहीं होता? क्या आपका	पत्नी —अच्छा 'गतव्यथ' का आप क्या अर्थ
बाहरका व्यवहार उद्वेगरहित, न्याययुक्त और पवित्र है ?	करते हैं ?
यदि ऐसा है तो फिर आपके मनमें क्रोध तथा उद्वेग क्यों	पण्डितजी—किसी भी प्रकारके भारी-से-भारी
हुआ और राजासे आपने अहंकारके वचन क्यों कहे?	दु:ख अथवा दु:खके हेतु प्राप्त होनेपर भी जो दुखी नहीं
पण्डितजी —(विनम्र होकर) ठीक है, इस गुणकी	होता अर्थात् जिसके अन्त:करणमें कभी किसी तरहका
तो मुझमें कमी है।	विषाद, दु:ख या शोक नहीं होता, वही 'गतव्यथ' है।
पत्नी —अच्छा, 'दक्ष' का आपने क्या भाव	पत्नी —क्या आपके चित्तमें कोई व्यथा नहीं
बतलाया ?	होती ? यदि नहीं होती तो फिर राजाके वचनोंपर और
पण्डितजी—जिस महान् कार्यके लिये मनुष्य-	मेरे समर्थन करनेपर आपको इतना उद्वेग और व्यथा क्यों
शरीर मिला है, उसे प्राप्त कर लेना अर्थात् भगवान्को	होनी चाहिये?
प्राप्त कर लेना ही मनुष्यकी यथार्थ दक्षता है, जो अपना	पण्डितजी —तुम्हारा कहना सत्य है। यह भाव
काम बना लेता है, वही दक्ष कहलाता है।	मुझमें बिलकुल नहीं है। मनके विपरीत होनेपर प्रत्येक

पदपर केवल व्यथा ही नहीं भय, उद्गेग, ईर्ष्या, शोक धर्मज्ञ, सदाचारी, त्यागी, सन्तोषी, विद्वान् तो हैं ही, आदि विकार भी मुझमें पर्याप्त मात्रामें दिखायी पडते हैं। तत्त्वज्ञ राजाके संग-प्रभावसे आपको परमात्माकी पत्नी—अच्छा, 'सर्वारम्भपरित्यागी' से आप क्या प्राप्ति भी हो जायगी—इसी लक्ष्यसे मैंने आपको वहाँ भेजा था। समझते हैं? पण्डितजी - जो बाहर-भीतरके समस्त कर्मीं के अब यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं भी आपके साथ त्यागकर केवल प्रारब्धपर ही निर्भर रहता है, अपने चलना चाहती हुँ। स्वार्थको सिद्धिके लिये कुछ भी कर्म नहीं करता, पण्डितजी—(कृतज्ञताके साथ) मैं अब इस अपने-आप जो कुछ प्राप्त हो जाय, उसीमें सन्तुष्ट रहता बातको समझ गया। सचमुच तुमसे कोई हानि नहीं है तथा प्रारब्धवश होनेवाली क्रियाओंमें जिसके कर्तापनका होगी। तुम्हीं तो मेरा सच्चा उपकार करनेवाली परम सुहृद् हो। वस्तुत: सच्चे सुहृद् वही हैं, जो अपने प्रिय अभिमान नहीं है, ऐसे बाहर और भीतरके त्यागीको 'सर्वारम्भपरित्यागी' कहते हैं। सम्बन्धीकी परमात्माकी प्राप्तिमें सहायता करते हैं। पत्नी—बहुत सुन्दर व्याख्या है, परंतु बतलाइये चलो, तुम तो वहाँ भी परमात्माकी प्राप्तिमें मेरी सहायता क्या आपने बाहर और भीतरसे सब कर्मोंका त्याग कर ही करोगी। दिया? और क्या आपके अन्त:करणमें कोई सांसारिक तदनन्तर वे दोनों सब कुछ त्यागकर घरसे निकल संकल्प नहीं होता? यदि नहीं, तो फिर आपको इतना गये। इधर, गुप्तचरने जो उन दोनोंकी परस्पर बातचीत अहंकार क्यों होना चाहिये ? बाहरसे तो आप सब कर्म सुनी और जो घटना देखी, वह सब राजाके पास जाकर करते ही हैं। पण्डितजी — सत्य है, यह बात तो मुझमें बिलकुल ज्यों-की-त्यों कह दी। राजाने अपने राज्य, कोष आदि ही नहीं घटती। मैं अपनी सारी त्रृटियोंको समझ गया, सब तो पहले ही अपने पुत्रको सँभला दिये थे, अब सचमुच मैं अबतक अर्थ ही करता था। रहस्यसे गुप्तचरकी बात सुनकर वे भी राज्य छोडकर चल दिये। उन्हें रास्तेमें सम्मुख आते हुए ब्राह्मणदम्पती मिले। अनभिज्ञ था। अब कुछ-कुछ समझमें आ रहा है। अत: तुम अनुमति दो, अब मैं बाहर और भीतरसे सब कुछ राजाने बड़े उल्लासके साथ उनसे कहा—'पण्डितजी त्यागकर सच्चा संन्यासी बनने जाता हूँ। यों कह महाराज! अब आप गीताके उस श्लोकका रहस्य पण्डितजी सब कुछ छोड़कर घरसे चलने लगे। समझे।' पत्नीने प्रार्थना की-महाराजजी! मैं भी आपके पण्डितजीने नम्रताभरे शब्दोंमें उत्तर दिया—अभी समझा नहीं, समझनेके लिये जा रहा हूँ। साथ ही आपका अनुगमन करना चाहती हूँ। पण्डितजी—मैं अपने साथ किसी झंझटको नहीं राजा भी उनके साथ ही चल पड़े। तीनों एक एकान्त रखना चाहता। फिर स्त्रीको तो रखुँ ही कैसे? पवित्र देशमें जाकर निवास करने लगे। राजा और ब्राह्मणपत्नी पत्नी—नाथ! मुझे आप झंझट न समझिये। मैं तो तत्त्वज्ञानी जीवन्मुक्त महात्मा थे ही। उनके संगके प्रभावसे पण्डितजी भी परमात्माको प्राप्त हो गये। आपके साधनमें कोई विघ्न नहीं करूँगी। मैंने जो आपको राजाके पास भेजा था, सो धनके लिये नहीं। [यह कहानी गीताके बारहवें अध्यायके १६ वें धनको तो मैंने एक निमित्त बनाया था। मेरा उद्देश्य तो श्लोकका निवृत्तिपरक अर्थ करके बतलायी गयी है। यही था कि आप जीवनके मुख्य लक्ष्यको प्राप्त कर लें। इसका जो प्रवृत्तिपरक अर्थ होता है, वह इससे भिन्न Hinखांडकाकाडलेकाड्कार्यकात्राह्म प्रमासाव्यक्षित्र हो gardhaहैं | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha

भाग ९१

क्या ईश्वर-साक्षात्कार भी एक वैज्ञानिक सत्य नहीं ? संख्या १२] क्या ईश्वर-साक्षात्कार भी एक वैज्ञानिक सत्य नहीं ? (पं० श्रीधर्मदेवजी शास्त्री, दर्शनकेसरी, पंचतीर्थ) ब्रह्मलीन स्वामी श्रीअच्युतमुनिजी महाराज एक कर सकता हूँ?' तत्त्वदर्शी और पहुँचे हुए सन्त थे। बनारसमें आजसे दस 'अवश्य; लोग तो ईश्वर-साक्षात्कारको बहुत वर्ष पूर्व मुझे जब उनके प्रथम साक्षात्कारका सुअवसर कठिन बताते हैं, परंतु मेरा अनुभव भिन्न है। सांसारिक मिला, तब मैंने उनसे कुछ प्रश्न किये थे, जिनमेंसे एक विषयोंकी प्राप्तिसे ईश्वर-प्राप्ति आसान है, परंतु मनुष्यको प्रश्नकी चर्चा मैं प्रस्तुत लेखमें करूँगा। जितनी चिन्ता विषय-प्राप्तिकी है, उतनी इच्छा ईश्वर-प्राप्तिकी नहीं है; यदि उत्कट इच्छा हो जाय तो ईश्वर-'महाराज! आप विद्वान्, भक्त और ज्ञानी हैं; कुपया मुझे यह बताइये कि आपको ईश्वरका साक्षात्कार हुआ साक्षात्कार अविलम्ब हो सकता है। वस्तुत: मनुष्य है ? यदि आप भी अबतक ईश्वरका साक्षात्कार नहीं कर ईश्वरका साक्षात्कार करना नहीं चाहता, परंतु कहता यह सके तो फिर मेरे-जैसे व्यक्तिको तो उसकी प्राप्ति कैसे है कि ईश्वर-साक्षात्कार हो नहीं सकता। यह उसकी होगी? कृपया साफ-साफ बताइये—मैं यह जानना आत्मविडम्बना है।' 'महाराज! थोड़ा इस विषयको आज-कलकी वैज्ञानिक चाहता हूँ कि ईश्वरका साक्षात्कार किसीको होता भी है या यह केवल मनकी कल्पनामात्र है?' मैंने पूछा। भाषामें स्पष्ट कीजिये।' मैंने विनयपूर्वक कहा। 'तुमने अच्छा प्रश्न किया है; मैं तुम्हें स्पष्टरूपसे 'ईश्वर-साक्षात्कार भी एक वैज्ञानिक सत्य है। कहना चाहता हूँ कि मुझे ईश्वरका साक्षात्कार होता है जिस प्रकार कोई वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालामें बैठकर और सदा सर्वत्र उसीका दर्शन होता है।' एक नियत शास्त्रीय रीतिसे तथा बाह्य साधनोंसे वैज्ञानिक 'लेकिन महाराज! यह कैसे पता चले कि आपका सत्योंका अनुसन्धान करता है, उसी प्रकार एक यह ज्ञान यथार्थ है, भ्रम नहीं है?' आध्यात्मिक व्यक्ति भी अध्यात्मशास्त्रकी नियत रीति 'मैं स्वयं भी तुम्हारी-जैसी स्थितिमेंसे गुज़रा हूँ, और शास्त्रीय विधिका अनुसरणकर मात्र आन्तर साधनोंसे इसलिये तुम्हारी मनोदशाको मैं समझ सकता हूँ, परंतु उस अनाद्यनन्त सत्यका साक्षात्कार कर सकता है। अब मैं बिना सन्देह कह सकता हूँ कि मुझे ईश्वरका जिस प्रकार न्यूटनकी बातपर विश्वास करके लोग दर्शन वैसे ही हो रहा है, जैसे मेरे सम्मुख बैठे हुए पृथ्वीके आकर्षण-सिद्धान्तको सिद्धवत् मानकर व्यवहार तुम्हारा और सामने बहती गंगाका। अपने इस ज्ञानकी करते हैं, उसी प्रकार ब्रह्मासे लेकर सहस्रों ऋषियोंके यथार्थतामें मुझे तनिक भी भ्रम नहीं है। मुझे तो ऐसा अनुभवके आधारपर आज भी यदि जनता ईश्वरपर लगता है कि मेरा इन्द्रियजन्य ज्ञान धोखा दे सकता है विश्वास करके चलती है और कर्ममें प्रवृत्त तथा विकर्मसे निवृत्त होती है तो इसमें क्या आश्चर्य है? और देता है, परंतु ईश्वर-साक्षात्कार-विषयिणी प्रतीतिमें तो मुझे धोखेका आभास भी नहीं मिलता।' और फिर जैसे किसी वैज्ञानिक अन्वेषणके बाद जाने गये सत्यको झुठलानेका अधिकार भी उसी व्यक्तिको 'परंतु महाराज! उपनिषदोंमें तो आया है—'**अविज्ञातं** विजानताम्' (जो यह कहते हैं कि ईश्वरको मैं जानता है, जो एक सर्वसम्मत वैज्ञानिक पद्धतिसे प्रयोग करके हूँ, वे नहीं जानते।)' उसके विरोधी सत्यका पता लगाकर पूर्व अनुभवियोंको 'परंतु भाई! उपनिषद्के इस वचनको जानता हुआ विश्वास दिला देता है, उसी प्रकार अध्यात्मसम्बन्धी आजतकके अनुभवोंको झुठलानेका भी वही अधिकारी भी कहता हूँ कि मैं ईश्वरको देख रहा हूँ। जब मुझे ईश्वरका दर्शन हो रहा है, तब मैं झूठ क्योंकर बोल हो सकता है, जो अध्यात्मशास्त्रकी एक वैज्ञानिक सकता हूँ?' पद्धतिसे प्रयोग करके कोई नयी बात कहता है।' 'क्या महाराज! मैं भी उस परात्पर शक्तिका दर्शन स्वामी श्रीअच्यतम्निजी महाराजने जो शब्द कहे

भाग ९१ थे, अक्षरश: वे ही शब्द मैंने नहीं लिखे। लिखना है भी गये हैं, उसी प्रकार कभी समय था जब संसारमें और कठिन; परंतु इतना तो मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ विशेषकर भारतवर्षमें जनताकी एक बड़ी संख्या आध्यात्मिक कि स्वामीजीके कथनका तात्पर्य यही था। दृष्टिसे व्यक्ति, समाज और राष्ट्रका विकास करती थी और हमारा विश्वास है कि संसारके कल्याणका वही पिछले आन्दोलनमें जब मुझे देहरादून-जेलमें छ: एक महामार्ग है।' मास रहनेका अवसर आया, तब वहाँ यह प्रश्न फिर मेरे इस कथनको सुनकर एक भाईने कहा-उग्ररूपसे मेरे सामने आया। कुछ कम्युनिस्ट और 'ईश्वर और धर्म तथा परलोकपर विश्वास करना सोशलिस्ट भाई भी हमारे साथ थे। कम्यूनिज़्ममें ईश्वर मनुष्यके लिये तभी ठीक था, जब मनुष्य-समाजने और धर्मका कोई स्थान नहीं। वह मात्र आधिभौतिक प्रकृतिपर विजय नहीं प्राप्त की थी और वह प्रकृतिकी वैज्ञानिक पद्धतिसे विचार करना सिखाता है। हमलोगोंकी— विविधताओंको देखकर डरता था; अब तो मनुष्य जो धार्मिक दृष्टिकोण रखते हैं—सभी विषयोंको प्रकृतिका स्वामी बन गया है।' आध्यात्मिक दृष्टिसे विचारनेकी आदत है; इसलिये प्राय: 'अब मनुष्य प्रकृतिका स्वामी बन गया है, यह प्रत्येक विचारणीय विषयपर कुछ दूर तो हम दोनोंकी आप कहते हैं; मैं तो यह कहता हूँ-मनुष्यने प्रकृति-विचार-शैली एक समान चलती; फिर आगे जाकर हम दासीको अपनी स्वामिनी बना लिया है। जितना प्रयत्न दोनों भिन्न-भिन्न प्रतीत होते। मुझे यहाँ कम्यूनिज्मके मनुष्यने प्रकृति-दर्शनके लिये किया है, उसका शतांश भी यदि वह आत्म-दर्शनके लिये करता तो आज गुण-दोषोंपर विचार नहीं करना है, न तो प्रस्तुत लेखके साथ इस विषयका सम्बन्ध है। मैं तो केवल यहाँ यह मानव-समाजका रूप कुछ और ही होता। आजका बताना चाहता हूँ कि आध्यात्मिक सत्यको जाननेकी भी मनुष्य देश और कालकी दूरीको जीतनेमें समर्थ हो सका है; परंतु उसने एक मनुष्यको दूसरे मनुष्यसे इतना अधिक एक वैज्ञानिक पद्धति है। मैंने अपने कम्यूनिस्ट साथियोंको जो बात कही, दूर कर दिया है कि प्रति बीस वर्षोंमें विश्व-युद्धकी उसका निर्देशभर करना चाहता हूँ। मैंने कहा—'जिस अवस्था उपस्थित हो जाती है। वास्तवमें मनुष्यकी प्रकार अन्य सब भौतिक विषयोंके अलग-अलग शास्त्र सफलता प्रकृति-विजयी होनेकी अपेक्षा मनोविजयी हैं, उसी प्रकार अध्यात्मका भी एक सुव्यवस्थित शास्त्र होनेमें अधिक है। प्रकृतिको उपयोगी बनानेकी अपेक्षा है। आजकल युद्धमें हिंसाके साधनोंसे विजय प्राप्त प्रकृति-निर्माताका प्रत्यक्ष करना अधिक अच्छा है और यह कार्य धर्मके बिना नहीं हो सकता।' करनेका सिद्धान्त यूरोपका माना हुआ है और उसके लिये एक शास्त्र है, जिसके अनुसार सैनिकोंको बाकायदा 'लेकिन धार्मिक व्यक्ति सदा प्रतिगामी और अन्याय-शिक्षा दी जाती है, आक्रमण करने और आक्रमणसे अत्याचारके समर्थक होते हैं - रूसमें ऐसा ही हुआ था।' बचने तथा प्रत्याक्रमण करनेका प्रकार सिखाया जाता 'यह आपका भ्रम है। धर्मात्मा सदा पतितों और है। यदि कोई राष्ट्र इस प्रकारके साधनोंका ठीक-ठीक असहायोंका ही साथ देगा। रूसकी बात तो मैं नहीं शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त न करके युद्ध करे और वह पराजित कहता। हमारे देशमें आज साम्प्रदायिक झगड़े करानेवाले हो जाय तो इससे उस शास्त्रको झूठा कहना ग़लती वे ही व्यक्ति हैं, जो धर्मसे वस्तृत: अपरिचित हैं। एक होगी। इसी प्रकार अध्यात्मका भी एक शास्त्र है। जो बात और भी है, कैसी भी अच्छी चीज बुरे आदिमयोंके व्यक्ति अध्यात्मशास्त्रमें प्रतिपादित पद्धतिसे मन, शरीर हाथोंमें जाकर अच्छी नहीं रहती। धर्म इस नियमका और बुद्धिका विकास करेगा, वह अध्यात्मसम्बन्धी अपवाद नहीं है। इसमें धर्मका दोष नहीं, 'सैषा सत्यका दर्शन कर सकेगा। जैसे आजकल संसारमें प्राय: पुरुषगर्हा न शास्त्रगर्हा '-यह पुरुष-निन्दा है, शास्त्र-लोग आधिभौतिक ढंगसे ही विचार करनेके अभ्यस्त हो निन्दा नहीं।'

विजय निश्चित है संख्या १२] विजय निश्चित है (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) साधनाके क्षेत्रमें काम, क्रोध, लोभ, मोहादि शत्रुओंसे (काम, क्रोध, लोभ, मोहादि) ही बाधक हैं, जिनसे साधक हमारा जो संग्राम है, उसमें हमारी विजय निश्चित है; अपनेको पहलेसे ही हारा हुआ समझता है। परंतु आत्माकी अपार शक्तियोंको स्वीकार कर लेनेके बाद साधना-क्रममें कारण कि साधनामें सहायक प्रभु हर समय, हर अवस्थामें हमारे साथ हैं। जहाँ अन्त:स्थ परमात्माकी अपार शक्तिमें उसे किसी भी विघ्न-बाधासे परास्त होनेका भय नहीं है। जहाँ आत्माके बलका आश्रय है, वहाँ सभी विरोधी विश्वास होता है, वहाँ काम-क्रोधादि शत्रु स्वयं दब जाते हैं। फिर वे हमारे सामने सिर भी नहीं उठा सकते। आचार्य शक्तियाँ स्वत: परास्त हो जाती हैं। इसी भगवदीय शक्तिका शंकर, बुद्ध आदि महापुरुषोंके भीतर जो शक्ति थी, वही आश्रय लेनेपर तथा प्रभुपदकी शपथ लेकर ही लक्ष्मणजीने शक्ति हमारे भीतर भी है। यदि हम उसे ठीक-ठीक कहा था— पहचानें और उसकी प्रेरणासे ही अपने कर्मींका संचालन 'तोरौं छत्रक दंड जिमि तव प्रताप बल नाथ।' करें तो सफलता निश्चित है। निरन्तर आत्मनिरीक्षण और श्रीलक्ष्मणजीने जब इस बलका आश्रय लिया तभी साधन करते रहनेसे इन भयंकर कहे जानेवाले शत्रुओंको तो '*डगमगानि महि दिग्गज डोले'*—पृथ्वी डगमगाने लगी फिर कोई ढूँढे भी नहीं पा सकता। इनकी क्या सामर्थ्य थी। हनुमान्जीको जब इस शक्तिका स्मरण होता था तभी है कि ये फिर हमारी शान्तिको भंग कर सकें! वे अतिमानवीय, अलौकिक कार्य सम्पन्न कर डालते थे। साधकको निरन्तर उत्साह रखना चाहिये, भगवान्के जब जाम्बवन्तने इस शक्तिका उन्हें स्मरण दिलाया तभी तो हनुमान्जी सुमेरुपर्वतके समान आकारमें 'कनक पथमें चलनेवालेको कभी निराश होनेकी आवश्यकता नहीं **भृधराकार सरीरा** 'प्रकट हुए। जहाँ इस अपार दैवी है। वह निराश हो ही क्यों ? अपने लक्ष्यकी साधनाकी ओर बलका हमने आश्रय लिया, वहीं हमें सभी प्रकारके बल जिस क्षण उसने पग बढ़ाया कि प्रभु उसके साथ हुए। जब 'सर्वलोकमहेश्वर' हमें हमारे सुहृद्के रूपमें सहारा दिये तथा शक्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं। काम-क्रोध-मोह आदि हमें तभीतक सताते हैं हुए हैं तो फिर हिम्मत क्यों हारना है ? मोहसे कातर अर्जुन जबतक हम भागवती शक्तिका आश्रय नहीं लेते। गीतामें भगवान्से पूछता है—'प्रभो! अनिच्छित, बलपूर्वक लगाये हुएके सदृश पुरुष किससे प्रेरा हुआ पापका आचरण करता भगवान्ने कई स्थलोंपर और कई बार घोषणा की है कि है ?' इस प्रकार सरल बालककी भाँति अर्जुनके पूछनेपर 'निरन्तर मुझमें मन लगा लो, सारे विघ्न-बाधाओं और कठिनाइयोंको लाँघ जाओगे।' भगवान् कहते हैं—'अर्जुन! ये काम और क्रोध आसक्ति हैं—ये महाअशन अर्थात् अनन्त भोजनोंसे भी तृप्त नहीं मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि। होनेवाले हैं-ये मनुष्यके बहुत बड़े शत्रु हैं।' ऐसा कहते (गीता १८।५८) हुए भगवान् अर्जुनको ललकारते हैं—'जिह शत्रुं महाबाहो एकमात्र भगवान्का आश्रय ले लेनेपर फिर पाप-कामरूपं दुरासदम्।' 'हे महाबाहो! अपनी शक्तिको तापकी भावना ही क्यों आयेगी? जब प्रभुकी अनन्त शक्ति समझकर इस दुर्जय कामरूप शत्रुको मार।' निरन्तर, हर अवस्थामें साथ है तो हमें फिर डर किसका वह शक्ति क्या है? वह है भगवान्की शक्ति। वह और कैसा? हमारी सफलता निश्चित है, काम-क्रोधादि भागवती शक्ति हम सभीमें हैं, जिसे यदि हम अज्ञान और विकारोंपर हमारी विजय निश्चित है। हम पूर्ण सफल होंगे या नहीं, हमारा कल्याण होगा संशयका आवरण हटाकर पहचान लें और उसका बल तथा आश्रय ठीक-ठीक प्राप्त कर लें तो संसारमें इस या नहीं, प्रभुके दर्शन होंगे अथवा नहीं, इसमें हम सन्देह अजेय दीखनेवाले कामरूपी शत्रुका सदाके लिये उन्मूलन ही क्यों करें? किया जा सकता है। साधनाके क्षेत्रमें ये मायिक शक्तियाँ गीता तो उद्घोष करती है-

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। ही शाश्वत शान्ति, सनातन शान्ति प्राप्त करनेका एकमात्र साधन है। हम सभी भगवान् श्रीहरिकी वात्सल्यमयी विशाल श्रीर्विजयो भूतिर्धुवा नीतिर्मतिर्मम॥ गोदमें हैं। आवश्यकता है आँखें खोलकर देखनेकी, हृदय (१८।७८) जहाँ योगेश्वर श्रीकृष्ण और धनुर्धर अर्जुन हैं, वहाँ खोलकर अनुभव करनेकी—'न मे भक्तः प्रणश्यति'— अवश्य ही विजय है। संसारके परम आश्रय भगवान् मेरा भक्त कभी नष्ट नहीं होता। भगवान्की अतिशय प्रेम नारायणका बल ले करके नर यदि अपने कर्तव्यकर्मोंमें और वात्सल्यमयी यह घोषणा अविश्वसनीय कैसे हो प्रवृत्त हो तो उसकी विजय सुनिश्चित है, इसमें सन्देह नहीं सकती है ? यही तो प्रभुकी आन-बान है, अधमोद्धार ही तो है। वे नारायण हर समय हमारे साथ हैं तथा हमेशा हमारे भगवान्का विरद है। फिर चाहे जैसे भी हम हों, चिन्ता क्या? योगक्षेमके लिये मार्गदर्शन करनेहेतु सदा तत्पर रहते हैं। खुब धैर्य, उत्साह, प्रेम और मस्तीके साथ हमें निरन्तर आवश्यकता है हमें धनुर्धर बननेकी—चतुर्दिक् दीखनेवाले भगवान्के पथमें चलना चाहिये। उनकी कृपाकी अनवरत इन विकाररूप प्रबल शत्रुओंको परास्त करनेके लिये वर्षा हम सबपर हो रही है। उस कृपासे गूँगे भी वाचाल हो भगवत्प्रेरणाका अनुभव करते हुए अपने हाथमें शस्त्र-अस्त्र जाते हैं, लॅंगड़ा मनुष्य भी दुर्गम पहाड़ लॉंघ जाता है। उनकी लेनेकी। हमें सदैव अर्जुनकी भाँति **'शिष्यस्तेऽहं शाधि मां** कृपासे सारे असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते हैं। त्वां प्रपन्नम्' तथा 'करिष्ये वचनं तव'—'मैं आपका भगवानुकी यह दया तो हमें सहजरूपसे ही प्राप्त है। शिष्य हूँ, मैं आपकी एक-एक बात मानूँगा।' इसीकी टेर मनुष्यमात्रपर उनकी यह कितनी बड़ी दया है कि उनके लगानी चाहिये। फिर तो जीत हमारी है। हम सभी नर हैं—वे स्मरणमात्रसे मनुष्य आवागमनके चक्करसे सदाके लिये छूट जाता है। 'यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात्। ही एक नारायण हैं—हम भगवान्के हैं, भगवान् हमारे हैं, संशय छोड़कर हमें यही दृढ़ निश्चय करना है। भगवान्के विमुच्यते""।' यह भगवान् हरिकी हमपर कैसी आत्यन्तिक वचनोंका विश्वास करके हम उनके 'योगक्षेमं वहाम्यहम्' दया है। कैसी करुणा है। हमारे लिये कितना कल्याणकारी आदि वचनोंमें अखण्ड आस्था रखें। तभी निश्चल, निर्द्वन्द्व है, यह उनका करुणापूर्ण वात्सल्य! और अलमस्त होकर हम भगवत्पथमें चल सकेंगे। यदि हम मुर्देकी भाँति पड़े रहें कि अभी हमसे क्या भगवान्की तो यह उद्घोषणा ही है कि महापापी भी यदि होगा ? तो यह दुर्लभ मनुष्य-जीवन यों ही नष्ट हो जायगा। अनन्यभावसे मुझे भजता है तो वह तत्काल (धर्ममय इस मनुष्य-जीवनको पाकर भी यदि हम न चेते और अपना कल्याण न कर पाये तो फिर क्या किया ? येन-केन-प्रकारेण स्वरूपवाला) धर्मात्मा हो जाता है। यदि वह एक बार भी आर्त्तभावसे प्रभुको पुकारे और एकमात्र उनकी शरणकी जीवनके दिन बिता देना आत्माका महान् अपमान करना है। याचना करे तो उसी क्षण उसके सभी पाप भस्म हो जाते हैं इसके लिये हमें भारी पश्चात्ताप करना होगा। मनमें ऐसी और प्रभु उसे अपनी गोदमें उठा लेते हैं। उस परम प्रभुकी दीनता कभी न आने दें कि मेरे किये क्या होगा? यह इस हम सन्तान हैं, परम पिता सदा ही यह चाहते हैं कि हम तमोगुणी शरीरका और उसकी बुद्धिका परमात्मामें विश्वासके पुण्यात्मा बनें, सत्पथपर चलें—उनके सच्चे पुत्र और भक्त अभावका लक्षण है। जिस हृदयमें भगवानुकी भक्ति और कहलायें। कभी उनके नामपर कलंक न लगने दें। इस उसकी अपार अहैतुकी दयामें विश्वास है, वहाँ नित्य-

a finadrican bire and set her bithery decidated by a final arms of the set of

निरन्तर प्रकाश, ज्ञान, आनन्द और उत्साह उमड़ता ही रहता

है। वहाँ चित्तकी कली-कली खिल जाती है। उस स्थितिमें

प्रतिपल एक अपार आनन्दका महासमुद्र लहरें लेता रहता

है। वहाँ आनन्द और उत्फुल्लताके सिवा कुछ है ही नहीं।

विषाद, अवसाद आदि तो अविश्वासके लक्षण हैं—यह तो

तमोगुणकी पिशाचलीला है। प्रमाद, आलस्य और निद्रा-

भाग ९१

अवस्थामें वे हमें सत्पथमें चलते रहनेके लिये सदा सहारा और प्रोत्साहन देते रहते हैं, देनेके लिये सदैव तत्पर रहते हैं। प्रभु तो चाहते ही हैं कि उनकी सभी सन्तान 'साधु'—सच्चे साधु बनें। जहाँ हम आर्तभावसे ऐसे अशरणशरण प्रभुकी शरणमें गये कि वहीं हमारे जन्म-जन्मान्तरोंके पाप-ताप नष्ट हो जायँगे। जब हमारा जीवात्मा प्रभुमय हो जायगा, तब फिर

विजय निश्चित है संख्या १२] होगा, हमारे भाग्यमें तो विधाताने दु:ख, विपत्ति ही लिखे हैं, हमको बाँध नहीं सकता।' परमात्माके बलका आश्रय लेते महातमोगुणी भाव हैं। अत: समय रहते सजग होकर ही परमात्माकी मायासे बना हुआ यह संसार सर्वथा मिट परमात्माके बल और प्रकाशका आश्रय लेकर हमें अपने इन जायगा, और तब उसका मायावी फंदा हमारा कुछ नहीं सच्चे शत्रुओंका संहार करना चाहिये। भगवद्भक्त तो कभी बिगाडु सकेगा। संसार धोखा है। देखनेमात्रका ही सुन्दर निराश होगा ही नहीं; घोर निराशा—अमावस्याकी घनी है, और विचार करनेपर तो कुछ भी नहीं है। वस्तुत: अँधियारीमें भी उसका हृदय प्रभुके चरणोंमें ही लिपटा रहेगा इसका अस्तित्व ही नहीं है। जैसे केलेके वृक्षको उधेड़े और वह समझेगा कि आज ही सब विपदाओंकी इति है। तो उसमेंसे कभी गृदा निकलता ही नहीं—चाहे कितना ही अब तो शुक्लपक्ष आ ही रहा है, इस अमावस्याके छीले, छिलका-ही-छिलका निकलता जायगा। यही थोथी तमस्तोमके उस पारसे शुक्लपक्ष झाँकता प्रतीत होगा। उत्साह दशा इस नि:सार संसारकी है। इस मायावी संसारसे सदा कभी भंग नहीं होना चाहिये। किंतु विश्वास न होनेपर तो ही सतर्क तथा सावधान रहे, उसे प्रताड़ित करता रहे। अरे दुष्ट! सुन, तू चाहे करोड़ों प्रकारके छल-बलकर मुझे डिगानेका विषाद होगा ही। अत: विश्वास बना रहे। पापोंसे कभी डरे नहीं। मनुष्य दुर्बल है, उससे पाप प्रयास कर, पर जिसने भगवान्का आश्रय ले लिया है, वह कभी तेरे चंगुलमें नहीं पड़ सकता। तू अपनी (विषयोंकी) बन जाना बड़ी बात नहीं है, परंतु पापोंके भयसे त्रस्त होकर पीछे हट जाना कायरता है। ऐसी दुर्बलताको मनसे सेनाओंसहित वहीं जाकर डेरा डाल, जिस हृदयमें नन्दनन्दन सदाके लिये हटा दे। भगवदाश्रय होकर, पापकी पुनरावृत्ति श्रीकृष्ण-भगवान्का वास न हो। जिस भक्तके हृदयमें न हो, इसके लिये सदा सचेष्ट रहे। भगवान्के सामने भगवानुका निवास है, वहाँ तेरा क्या काम ? वहाँ तेरी एक अपना बल न दिखाये, वहाँ तो बस 'निर्बल है बल राम न चल पायगी। पुकारचों । केवल हरिकी शरण ही पूरी दृढ़ताके साथ इस प्रकार बस, साधनपथमें प्रतिपल एकमात्र लिये रहे। संसार और पापोंके सामने कभी हार न मान भगवानुका सहारा लेना चाहिये और यही दृढ़ विश्वास रखते बैठे। चोरोंके सामने दबना क्यों? उन्हें देख करके तो जोरसे हुए अडिग निश्चयके साथ, निर्द्वन्द्व हो, उस पथपर अग्रसर कह देना चाहिये कि—'सावधान! मैं जग रहा हूँ।' संसार होता रहे। आरम्भमें कुछ संघर्ष—काम-क्रोधादि विकारोंसे या विषय जब आँख दिखावें तब एकमात्र भगवान्के हवाई लडाई कुछ देरतक रहेगी और फिर? फिर तो बलका स्मरणकर उनको पैरोंके नीचे रौंद डालना चाहिये। साधनाका प्रशस्त आनन्ददायी मार्ग और उस मार्गपर हँसते जब मुझे भगवान्का बल प्राप्त है तब डरना किससे? हुए आनन्द मनाते चलते रहनेपर आगे और आगे जानेपर भगवान्के बलके महत्त्वको जान लेनेवाला संसारकी अपने लक्ष्यकी प्राप्ति! हृदयधन हरिका साक्षात्कार या असारताको प्रत्यक्षकर कह उठता है कि-मुक्ति; कुछ भी कहें। यही हमारी विजय है और यह होगी निश्चित ही! किंतु यह विजय कब मिलती है? यह विजय मैं तोहिं अब जान्यो संसार। मिलती है कामादि शत्रुओंका सर्वथा नाश होनेपर, जब हमारा बाँधि न सकहिं मोहि हरिके बल, प्रगट कपट-आगार॥ हृदय प्रभुका निवास बन जाता है-निज हित सुनु सठ! हठ न करहि, जो चहिह कुसल परिवार। लाभस्तेषां जयस्तेषां कृतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः॥ तुलसिदास प्रभुके दासनि तजि भजिह जहाँ मद मार॥ जिसके हृदयमें नील-कमलसदृश भगवान् जनार्दन (विनयपत्रिका १८८) तुलसीदासजीके समान हमें भी निर्भय होकर यह नित्य-निरन्तर विराजमान हैं, जीवनका सुलाभ और विजय कहना चाहिये—'अरे मायावी संसार! अब हमने तुझे जान निश्चितरूपसे उसीके लिये है। उसकी पराजय है ही कहाँ ? पराजय कभी हो ही नहीं सकती; क्योंकि उसने लिया है। तू प्रत्यक्ष ही कपटका घर है। पर अब हमें प्रभुका आश्रय लिया है, इसलिये विजय सुनिश्चित है। भगवानुका बल मिल गया है, इससे तू अपने कपट-जालमें

प्रसन्नता (पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल, एम०ए०, बी०टी०) प्रसन्नता किसको प्यारी नहीं है ? कौन ऐसा व्यक्ति जीवनसम्बन्धी नियमोंके पालनसे बढती है। संसारके होगा, जो प्रसन्न न होना चाहता हो? कौन ऐसा व्यक्ति सभी धर्मग्रन्थोंने इस आध्यात्मिक शक्तिके बढानेके उपाय बताये हैं। भारतीयोंने तो इस विषयका एक विज्ञान होगा, जो प्रसन्न मनुष्यके समीप न ठहरना चाहता हो? हम सभी बालकको प्यार करते हैं। क्यों? इसीलिये न ही निर्माण कर दिया है। आध्यात्मिक शक्तिके संचयके चार कि बालक उस प्रसन्नतामें रहता है, जो हमें दुर्लभ है। खिला हुआ फूल सबको प्यारा है और मुरझाये हुए योगवासिष्ठकारने बताये हैं। वे ये हैं-शम, सत्संग, फूलका सभी तिरस्कार करते हैं। रोते हुए मनुष्यसे सन्तोष और विचार। मनका अनेक प्रकारसे नियमन सबका जी ऊब जाता है; हँसते हुएका सभी स्वागत करना ही शम है; सात्त्विक उपवास, इन्द्रियनिग्रह आदि करते हैं। उससे किसीका जी नहीं ऊबता। जिसका मन शमके ही अन्तर्गत हैं। सत्संगसे कुवृत्तियाँ निवृत्त होती प्रसन्न नहीं, उसके पास कुछ नहीं और जिसका मन हैं और सुप्रवृत्तियाँ सबल होती हैं तथा अनेक प्रकारके सद्विचार मनमें उठते हैं, जो हमारे मनको काबूमें लानेमें प्रसन्न है, उसके पास सब कुछ है। सहायता करते हैं। दूसरे व्यक्तियोंका आध्यात्मिक बल प्रसन्तता शक्तिकी परिचायिका है। जिस मनुष्यके अन्दर आध्यात्मिक शक्ति है, वहीं प्रसन्न रह सकता है। हमें अपने आपको सँभालनेमें गुप्तरूपसे सहायता देता है प्रसन्नता स्वयं उस शक्तिकी उत्पादिका भी है। जो मनुष्य और ज्ञानमें हमारी रुचि बढ़ाता है। सन्तोषसे हमारी जितना प्रसन्न रहता है, वह अपना आध्यात्मिक बल शक्तियोंका अपव्यय रुकता है। विचारके द्वारा हम भले-उतना ही बढा लेता है। इतना ही नहीं, वह अपनी ब्रे, सत्-असत्की पहचान करते हैं। मनुष्य विचारके शारीरिक शक्तिकी भी वृद्धि कर लेता है। मन प्रसन्न द्वारा अपने आपको ऊँचा उठाकर परमपदको प्राप्त कर रहनेपर शरीरकी अमृत पैदा करनेवाली ग्रन्थियाँ अपना लेता है। पशुओं और बालकोंमें विचार करनेकी योग्यता काम भली प्रकारसे करती हैं और शरीरमें उन पदार्थोंका नहीं है; अतएव वे परमपदकी प्राप्ति नहीं कर सकते। प्रवाह जारी रखती हैं, जिनसे शरीर अक्षय बना रहता है यदि हम एक ही शब्दमें आध्यात्मिक उन्नतिका और बढ़ता है। विरला ही प्रसन्नचित्त मनुष्य रोगी मिलेगा। उपाय बताना चाहें तो इतना ही कहना पर्याप्त है कि

सांसारिक विषयोंमें मनका जाना रोकनेसे आध्यात्मिक

शक्ति बढती है और सांसारिक विषयोंमें उसके बेरोक-

टोक जानेसे उसकी शक्ति घटती है। भगवान् श्रीकृष्ण

ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।

सङ्गात् सञ्जायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते॥

क्रोधाद् भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः।

स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति॥

घातक है। प्रत्येक ऐसे विषयको मनसे हटाते रहना

चाहिये, जो प्रसन्नतामें बाधक हों। अपनी हानिपर

अर्थात् विषयोंमें रमण करना ही मनुष्यके लिये

(7157-53)

भगवद्गीतामें कहते हैं-

प्रसन्नता मानसिक तपसे प्राप्त की जाती है। बालककी

प्रसन्नता प्रकृति-दत्त है। पर उसकी प्रसन्नता सहज ही

भंग भी हो जाती है। प्रौढ़ मनुष्योंकी प्रसन्नता पुरुषार्थसे

उपलब्ध होती है। यह साधनासे आती है। प्रसन्नता प्रतिकृल

परिस्थितियोंसे नष्ट नहीं होती। प्रौढ़ लोगोंकी प्रसन्नता ही

वास्तविक प्रसन्तता है; क्योंकि वह स्थायी रहती है। इस

प्रसन्नताको हम सभी लाभ कर सकते हैं। इसके लिये हमें

उपायोंको काममें लानेसे हो सकती है। जिस प्रकार

शरीरकी शक्ति स्वास्थ्यसम्बन्धी नियमोंका पालन करनेसे बढ सकती है, उसी तरह मनकी शक्ति भी आध्यात्मिक

आध्यात्मिक शक्तिकी वृद्धि उस शक्तिके बढानेके

आध्यात्मिक शक्ति बढानी पडेगी।

िभाग ९१

संख्या १२] प्रसन्	नता १७
***********************************	**************************************
देरतक नहीं सोचना चाहिये। हानिकी भावना प्रसन्नताका	बाध्य होकर दान देता है तो ऐसा दान उसका कोई
नाश कर देती है। इससे हमारी आध्यात्मिक शक्तिका भी	कल्याण नहीं करता। प्रसन्नतासे दिया दान ही दोनों
ह्रास होता है। सब प्रकारकी घटनाओंके अच्छे पहलूपर	पक्षोंका कल्याण करता है। प्रसन्नताकी अवस्थामें जो
विचार करनेसे मनकी प्रसन्नता बनी रहती है। संसारकी	कार्य किया जाता है, वह त्रुटिहीन रहता है। यदि कोई
प्रत्येक घटनाके दो पहलू होते हैं। जिस मनुष्यका मन	ऐसा काम करते समय भूल हो भी जाती है तो वह तुरंत
घटनाके बुरे पहलूकी ओर चला जाता है, वह अपनी	दिखायी दे जाती है। किंतु अप्रसन्नताकी अवस्थामें किये
प्रसन्नताको अपने ही हाथों नष्ट कर डालता है। इसके	गये कार्यमें ऐसी अनेक त्रुटियाँ रह जाती हैं, जो काम
विपरीत जिसका मन अच्छे पहलूपर चला जाता है, वह	करते समय हमें दिखायी नहीं देतीं। मनुष्यको अपने
अपने आपको प्रसन्न बनाये रखता है। प्रत्येक प्रकारकी	ऊपर उतनी ही जिम्मेदारी लेनी चाहिये; जितनी वह
हानिसे मनुष्यका कुछ-न-कुछ लाभ होता है और	प्रसन्नतासे उठा सके।
प्रत्येक लाभसे कुछ–न–कुछ हानि होती ही है। हानिकारक	अप्रसन्नता आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों प्रकारकी
घटनाओंमें लाभको ढूँढ़ निकालना बुद्धिमानीका काम	शक्तियोंका ह्रास करती है। निराशावादी पुरुष सदा
है। यदि कोई लाभ प्रत्यक्ष न दिखायी दे तो हमें यह	आत्मघात करता रहता है। इसी तरह क्रोधी भी अपनी
समझना चाहिये कि उसका लाभ तत्काल अप्रत्यक्ष है,	सारी मानसिक शक्तिका नाश कर डालता है। ऐसे
पीछे प्रत्यक्ष हो जायगा।	लोगोंका शरीर भी रोगग्रस्त हो जाता है। वे थोड़े ही
प्रसन्नता एक संक्रामक पदार्थ है। जिस तरह रोग	कालमें अपनी जीवन-यात्रा समाप्त कर डालते हैं।
संक्रामक होता है, उसी तरह स्वास्थ्य भी संक्रामक होता	निराशा और क्रोध दोनों ही मनुष्यके लिये घातक हैं।
है। रोगी मनुष्य अपने रोगका प्रचार आस-पास रहनेवालोंमें	इन दोनोंका घनिष्ठ सम्बन्ध है। क्रोधका लक्ष्य दूसरेका
करता है; इसी प्रकार स्वस्थ मनुष्यको देखकर दूसरे लोग	विनाश करना है और निराशाका आत्मविनाश। क्रोध ही
भी स्वस्थताका अनुभव करने लग जाते हैं। प्रसन्नताका	कुछ कालके बाद निराशामें परिणत हो जाता है।
भी यही हाल है। शारीरिक विकार उतने संक्रामक नहीं	मनुष्यको चाहिये कि वह सदा ऐसे वातावरणमें
होते, जितने मानसिक विकार होते हैं। एक रोगी	अपने आपको रखे, जिसमें उसके मनकी प्रसन्नता नष्ट
मनुष्यको देखकर दूसरा तुरंत रोगी नहीं हो जाता, पर	न हो। उसे क्रोधी, निराशावादी, नुक्ताचीनी करनेवाले,
एक दुखी मनुष्यको देखकर दूसरेका हृदय भी दु:खसे	तथा ईर्ष्यालु लोगोंसे बचना चाहिये। उसे त्यागी और
भर जाता है। इसी तरह प्रसन्नचित्त अथवा हँसते हुए	परोपकारी पुरुषोंसे सम्पर्क बढ़ाना चाहिये। यदि उसे ऐसे
लोगोंके समाजमें जाकर हम भी प्रसन्न हो जाते हैं	पुरुषोंका सत्संग प्राप्त न हो तो उसे अपना समय उनके
अथवा हँसने लगते हैं।	विचारोंका मनन करनेमें बिताना चाहिये। सदाचारी
इस तरह हम देखते हैं कि मनुष्य अपने-आप	पुरुषोंके विचार पुस्तकोंमें पाये जाते हैं। हम जिस समय
प्रसन्न रहकर अनायास परोपकार करता है। अंग्रेजी	किसी महात्माके विचार किसी पुस्तकद्वारा प्राप्त करते
लेखक स्टिवेन्सन (Stevenson)-का कहना है कि	हैं, उस समय हम उसके सत्संगका ही लाभ करते हैं।
प्रसन्नचित्त मनुष्यका मिलना पाँच पौंडके नोटके मिलनेसे	महात्मागण सदा प्रसन्नचित्त रहते हैं और अपनी
अधिक लाभदायक है (A happy man or a woman is	मानसिक अवस्थाका प्रभाव दूसरोंपर अनायास ही डालते
a better thing to meet than a five pound note) I	रहते हैं।
मनुष्य जो काम प्रसन्नताकी अवस्थामें करता है, उसीसे	भूखा मनुष्य प्रसन्नचित्त नहीं रह सकता। प्रसन्नता
दूसरोंका वास्तविक लाभ होता है। बरबस चिढ़कर किये	क्षुधा–शान्तिकी परिचायिका है। वह पूर्णताके अनुभवका
गये कामसे कोई लाभ नहीं होता। यदि कोई मनुष्य	परिणाम है। अतएव जो मनुष्य अनेक प्रकारके पदार्थीका

इच्छुक है, वह कदापि प्रसन्नचित्त नहीं रह सकता। बिना और भी बढती है। यह ज्ञान-वैराग्यसे ही शान्त होती है। मनकी भूखको शान्त किये प्रसन्नता नहीं आती। यह भूख मनका भटकना जबतक जारी है, तबतक प्रसन्नताके दर्शन शरीरकी भूखके समान नहीं है। शारीरिक भूख भोजनकी नहीं होते। जब मन आत्मामें ही रमण करने लगता है, तब प्राप्तिसे शान्त होती है, मनकी भुख विषयोंके प्राप्त होनेसे उसकी स्वाभाविक प्रसन्नता फूट पडती है।

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई

(श्रीइन्दरचन्दजी तिवारी)

जब उस प्रेमकी दीवानीने अनुभव किया होगा इस स्वाभाविक गति, वायुका वेग, पृथ्वीकी चाल, भोगनेके परम अवस्थाको, प्रवेश किया होगा इस दिव्य अवस्था लिये, डूब जानेके लिये, मगनमन होनेके लिये, उस दिव्य

के संसारमें, एकाकार हो गयी होगी जब आपके लिये घड़ी, दिव्य आनन्दकी, तो भला इस पंक्तिके सिवा और उन पावन पुनीत क्षणोंमें उस प्रेमरसमें डूबी भक्त-

जब उसने सारी लोक-लाज, देश-काल, उचित-अनुचितका भाव भूलकर एक इकतारेके तारोंको छेड़कर

शिरोमणि मीराके अतिरिक्त कौन रहा होगा?

उसके हृदयको भी अपनी पावन पुनीत उँगलियोंका स्पर्श देकर उसमें भी भक्तिविह्नलता, भावविह्नलता उत्पन्न की होगी तो वह भी तो गा उठा होगा 'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई।'

जब बँध गये होंगे उस संत-शिरोमणिके पद-पंकजोंमें प्रेमके घुँघरू, भक्तिके घुँघरू, विरहके घुँघरू, नवजीवनके घुँघरू, दिव्य संगीतके घुँघरू, पावन नादके

घुँघरू, प्रेमरसिक्त घुँघरू तब प्रत्येक पदचापसे प्रत्येक घुँघरूसे झंकृत हुए होंगे दिव्य स्वर 'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई '।

जब बह चल होगा सारी मर्यादाका बाँध तोड़कर प्रेम-पयोधि, अविरल अश्रुधार नयनोंमें भरकर जब बह

चली होगी नेत्रोंसे प्रेमकी गंगा, जब प्रत्येक अश्रुकण परिपूरित हो उठा होगा प्रेमरससे, प्रेमके संगीतसे, तब एक पावन दिव्य घटना घटी होगी इसी धरतीके ऊपर, इसी अम्बरके नीचे, जब मन्दिरके प्रांगणमें साँवरेकी

मूर्तिके सम्मुख जड़-जंगम-चेतन सम्मिलित हो गये होंगे क्षणार्धके लिये उस पावन पुनीत दिव्य घड़ीमें और वनके मयूर, अमराईमें बैठी कोकिला और पपीहेने गाया होगा

'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई'।

और जीवन हैं।

क्या गाया होगा उन सबने 'मेरे तो गिरधर गोपाल दुसरा न कोई'। आप अपने भक्तके वशमें हैं, रहते हैं न, ऐसा

आपने सदैव कहा है-वसामि वैकुण्ठे। नाहं

आपका सर्वस्व आपका भक्त ही तो है। आपका तन, मन, धन, प्राण आपका भक्त ही तो है। आपकी अनुभूति आपके भक्तके द्वारा ही तो की

जा सकती है। भक्तके बिना आप अपने अस्तित्वको नहीं मानते। भक्तके बिना आप पाषाणकी मूर्तिके अतिरिक्त और

रह ही क्या जाते हैं? भक्त ही आपकी प्रतिष्ठाका सार हैं, जीवन्तता हैं

भक्तकी भक्तिका सूत्र यही तो है जो मीराको उपलब्ध हो गया था और वह गा उठी थी^{...} 'मेरे तो

अब क्या चाहिये? जिसको आपकी दी गयी अनुभूति

गिरधर गोपाल दूसरा न कोई '। मानवसे देवत्वकी प्राप्ति इन्हीं क्षणोंमें तो होती है। मानव-जीवनकी धन्यता इन्हीं क्षणोंको उपलब्ध

होनेपर ही तो प्राप्त होती है। हे भक्तवत्सल भगवान् श्रीनिवास! जिसको आपने कृपाकर ऐसे दिव्य क्षण उपलब्ध करा दिये, उसे भला

प्राप्त हो गयी है, उसे तो बस^{...} 'मेरे तो गिरधर गोपाल Hinखवां इन्हरितारिक्वर भारती हे के अपने के सम्मान में मान Hinखवां इन्हरितार के स्वाप्त मान Hinखवां इन्हरितार के स्वाप्त मान स्वाप्त मान स्वाप्त मान स्वाप्त स्वापत स्वाप्त स्वापत स्वापत स्वाप्त स्वापत स्वाप

भाग ९१

साधकोंके प्रति— संख्या १२] साधकोंके प्रति-['हरि ब्यापक सर्बत्र समाना'] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) यह संसार जो हमें इन्द्रियोंद्वारा दिखायी दे रहा है 'है' तो बदले कैसे? इससे यह सिद्ध हुआ कि यह 'होनापन' संसारका नहीं है, प्रत्युत परमात्माका है, जिससे और जो कुछ भी हमारे जाननेमें आ रहा है, क्या वह ठीक वैसा ही स्थिर है, अथवा प्रतिक्षण बदल रहा है? यह संसार 'नहीं' होता हुआ भी 'है' दीखता है। विचार करनेसे पता चलता है कि दृश्यमात्र प्रतिक्षण एक स्थूल दृष्टान्त है—बूँदीके लड्डमें प्रत्येक दाना बदल रहा है। शरीर जिस दिन जन्मा था,उस दिन कैसा बेसनद्वारा निर्मित है। बेसन फीका होता है, किंतु फीके था और आज कैसा है ? यह तो हमारे प्रत्यक्ष अनुभवकी बूँदीके दाने चीनीकी चाशनीमें डालनेसे मीठे हो जाते हैं। बात है। दो-तीन वर्षकी आयुमें जिसने इस शरीरको चीनीके संगसे बेसनकी फीकी बूँदी भी मीठी प्रतीत होने देखा हो, वही इसे आज देखे तो इतना बदला हुआ लगती है, तब चीनीके मीठेपनमें किसीको सन्देह कैसे पायेगा कि पहचानना कठिन हो जायगा। पाँच वर्ष पूर्व होगा ? उसी प्रकार प्रतिक्षण नष्ट होनेवाले नश्वर पदार्थोंको हमारा शरीर जैसा था, वैसा आज नहीं है, इसमें भी जो 'है' करके दिखा रहा है, उस परमात्माके 'होनेपन' में किसीको भी सन्देह नहीं होगा। अत: यह बात दृढ़तासे सन्देह कैसे हो सकता है ? जैसे चीनीकी मिठास लड्डमें कही जा सकती है कि शरीर बदल गया। परंतु कब सर्वत्र परिपूर्ण है, उसी तरह संसारमें वह 'है' (परमात्मा) बदला ? यह तो है नहीं कि दस वर्षतक बदला नहीं और सर्वत्र परिपूर्ण है। सत्य तो यह है कि इस 'है'के अन्तर्गत एक वर्षमें ही बदल गया। स्पष्ट है कि वह प्रत्येक वर्षमें ही संसार दिखायी दे रहा है। बदलता रहा है। जो प्रत्येक वर्षमें बदला है, वह बारह हम कहते हैं—'मैं शरीर हूँ और यह संसार है।' परंतु वस्तुत: ये भिन्न न होकर एक ही तत्त्व हैं अर्थात् महीनोंमें-से ग्यारह मासतक नहीं बदला, एक मासमें ही बदल गया, ऐसा भी नहीं है। अत: कहना पडेगा कि शरीर और संसार एक जातिके हैं, यथा—'*छिति जल* वह प्रत्येक महीनेमें बदला है। जो प्रतिमास बदला है, पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम वह प्रतिदिन बदला है और इसी तरह प्रतिदिन बदलनेवाला *सरीरा॥*' (मानस ४।११।४)। दूसरी ओर 'हूँ' प्रत्येक घंटेमें बदला है, प्रत्येक क्षणमें बदला है। इस (जीवका होनापन) और 'है' (परमात्माका होनापन) प्रकार यह सिद्ध हो गया कि शरीर प्रतिक्षण बदल रहा एक जातिके हैं। अथवा यों कहिये कि 'हूँ' और 'है' है। क्षण-क्षणमें होनेवाला परिवर्तन दिखायी न दे. यह तत्त्वतः एक ही हैं। संसारके कण-कणमें बूँदीके दानोंमें अन्य बात है। गम्भीरतासे सोचें तो स्पष्ट प्रतीत होगा चीनीकी तरह 'है' व्याप्त है। यहाँ इतना अन्तर अवश्य कि संसार परिवर्तनके अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं, है कि चीनीके बिना बुँदीकी (स्वतन्त्र) सत्ता है, परंत् प्रतिक्षण क्रिया-ही-क्रिया हो रही है। इस तथ्यकी (परमात्माके बिना) संसारकी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। सत्यतामें किसीको सन्देह नहीं होना चाहिये। संसार तो केवल रागके कारण ही सत्रूप प्रतीत हो रहा जो वस्तु प्रतिक्षण बदल रही है, उसे 'है' अर्थात् है। जब परमात्मतत्त्वके साक्षात्कारद्वारा रागका अत्यन्त स्थिर कैसे कहा जाय? वह तो गंगा-यमुनाके जलकी अभाव हो जाता है, तब सब ओर केवल परमात्मा ही दीखते हैं। भाँति बह रही है। गंगाजीके प्रवाहसे भी इसका प्रवाह तेज है। जो बदल रहा है, वह 'नहीं है' और जो 'नहीं है', वह एक बात और ध्यान देनेकी है—जिनकी दृष्टि 'है' के रूपमें अर्थात् स्थिर दिखायी दे रहा है—ये दोनों संसारसे परे कुछ देखना ही नहीं चाहती, उन्हें संसारको

देखते समय परमात्मा दिखायी नहीं देते, संसार-ही-

संसार दिखायी देता है। इसी प्रकार जो पूरी श्रद्धासे 'है'

बातें परस्पर सर्वथा विरुद्ध हैं। 'है' तब तो बदलता नहीं,

बदलता है तो 'है' नहीं। बदलता है तो 'है' कैसे? और

२० िभाग ९१ कल्याण (परमात्मा)-को देखेगा, उसे सर्वत्र 'है'-ही-'है' दिखायी ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्॥ पराभक्तिके द्वारा जो मुझे (भगवान्को) तत्त्वसे देगा, संसार नहीं। यह बात सर्वथा सत्य है; परंतु जबतक मनुष्य इस सत्यताको जानेगा नहीं, तबतक उसे परमात्मतत्त्व जान लेता है, वह मुझे प्राप्त हो जाता है। उसकी दृष्टिमें कैसे दिखायी देगा? मुझ वासुदेवके सिवा और कुछ भी नहीं रहता। 'भाव' ऊपर यह बात कही जा चुकी है कि संसार और ही पराभक्ति है। एक व्यापारी है, जो कोयला खरीदता शरीर एक ही जातिके हैं। जैसे किसी बालकसे कहा है, उसे कोयलोंमें भी रुपये दिखायी देते हैं। व्यापारीको कोयलोंमें रुपये 'भाव'से ही तो दिखायी देते हैं, वस्तुत: जाय कि यह लकड़ी मिट्टी ही है तो क्या वह इसे मान जायगा ? किंतु उस अबोध बालकके स्वीकार न करनेपर हैं तो वे कोयले ही; फिर भी व्यापारीको कोयलोंसे कुछ मतलब नहीं, उसे तो रुपयोंसे काम है। केवल रुपयोंकी भी बात तो सत्य है ही; क्योंकि मिट्टीमें डाला गया बीज प्राप्तिके लिये वह कोयले खरीदता और बेचता है। सर्व-ही वृक्ष बना, वही सुखनेपर काष्ठ हुआ। वह जला दिया जाय या सड-गल जाय तो अन्तमें मिट्टी ही होगा। पहले साधारणको उस व्यापारीकी तरह कोयलेमें रुपये नहीं भी वह मिट्टी ही था और बादमें भी मिट्टीरूपमें आ गया। दिखायी दे सकते। व्यापारीको 'भाव'से रुपये

दिखायी देते हैं, नेत्रोंसे नहीं, इसी प्रकार भक्तको नेत्रोंसे

संसार दिखायी देनेपर भी 'भाव'से परमात्मा दिखायी

देते हैं। इसीलिये भगवान् कहते हैं—'भक्तिसे मैं जैसा

हैं।

सके॥

सके॥

सके॥

सके॥

सके॥

है।

निकले।

हैं।

लेकिन।

K

₩

×

K

×

वैसे ही परमात्मा ही सारे शरीरों और पदार्थींके रूपमें हूँ, वैसा ही दिखायी दूँगा।' वस्तुत: परमात्मा अविनाशी एवं सर्वत्र व्यापक हैं, उन्हें देखनेहेतु चाहिये—प्रेम-दिखायी देते हैं। परमात्मा होते हुए भी तबतक दिखायी नहीं देते, जबतक उन्हें तत्त्वसे नहीं जाना जाता। भगवान् चक्षु— गीता (१८।५५)-में कहते हैं-'हरि ब्यापक सर्बत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना॥' भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः। (रा०च०मा० १।१८५।५) सुखासक्तको शान्ति कहाँ (संत श्रीपथिकजी महाराज) चिर शान्ति कहीं भी में सके। इस सुखासक्त मानव पा सारे विज्ञानी जन मिलकर सुख को दुखरहित न सके॥ बना लोगों संयम से है। को शक्ति मिल कुछ तप अनुकूल जाती K गयी भी व्यर्थ दिखती यदि मन को में सके॥ पर वह वश ला **<** औषधियों

से

क्रोध

जब

जो

तब

दैवी

जब

पर

आदि

का

काम

सी

रहता

होगा

रहती

हआ

कारण

में

आकृति

की

प्रबल

के

धारा

इसका

चलती

सत्संग

सबको

मोहादिक

सुन्दर

अन्तर

सबका

अपना

रमण

असत

तक

निरोग

रोग

दोष

मल

मैल

असत

प्रीति

बढ़ा

शृंगार

प्रकृति

निज

से

सम्पत्ति

कर

मिटा

सजा

न

धोने

छुड़ा

में

हटा

किया

न

न

होता

न

[प्रेषक—श्रीकुँवरसिंहजी]

न

दिखते

समझदारकी दृष्टिमें तो काष्ठरूपमें भी वह मिट्टी ही है।

इसी प्रकार संसारके आदिमें और अन्तमें भी परमात्मा हैं।

बीचमें जैसे मिट्टी ही काष्ठके रूपमें दिखायी देती है,

जो

पर

हमने

यह

जब

पर

सत

तब

आसुरी

ज्ञानोपदेश

₩

×

×

तन्त्र,

तुमने

इससे

वृत्ति

तक

क्या

की

पथिक

मन्त्र

इस

वेश्याओं

अभिमान

वृत्तियों

की

प्रभाव

चर्चा

कहाँ

क्या?

यदि

संख्या १२] पगर्ल	ो माई	
क्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक	ธรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรรร	
_{कहानी} — पगली माई		
(श्रीसुदर्शनसि	हजी 'चक्र')	
आगरेमें एक प्रतिष्ठित मुसलिम परिवार रहता था। परिवारमें एक बड़ी सुन्दर कन्या थी, जिसका नाम था जमीरन। उसके पिता इकबाल अहमद आगरेके प्रसिद्ध डॉक्टर थे। प्रचलित प्रथाके अनुसार आठ-नौ वर्षकी अवस्थामें ही जमीरनका विवाह बैरिस्टर याकूब साहबके सुपुत्रसे हो गया। भगवान्की इच्छा—जमीरन ससुराल जा पायी ही नहीं, उसके पित पढ़नेके लिये आगरेसे लखनऊ गये और इन्फ्लुएन्जाके शिकार हो गये। ठीक चौदह वर्षकी अवस्थामें जमीरन विधवा हो गयी। मुसलमानोंमें विधवा होनेकी क्या चिन्ता? पिता और भाई पुनर्विवाह कर देना चाहते थे। पता नहीं	देखा और दवा दी। परंतु रोगके मूलतक कोई पहुँच न सका। किसीकी दवासे कोई लाभ नहीं हुआ। विवाहकी चर्चा बन्द हो गयी। घरवालोंने देखा कि इस चर्चासे लड़कीको बहुत कष्ट होता है, अतएव उन्होंने आग्रह छोड़ दिया। डॉक्टरसाहब चाहते थे कि यदि वह शादी न करनेमें ही खुश है तो वैसा ही सही, पर वह प्रसन्न रहे। पता नहीं जमीरन क्या सोचा करती थी। वह एकान्तप्रिय हो गयी थी। किसीके भी समीप बैठना उसे पसन्द न था। कोई कहता तो स्नान कर लेती और कोई कहता तो भोजन। स्वयं उसे अपने शरीरके रक्षणका भी ध्यान नहीं रहता था।	
जमीरनको क्या धुन सवार हुई, उसने विवाह करनेसे	एकान्तमें बैठकर सूने नेत्रोंसे कभी कमरेकी छतको,	
स्पष्ट अस्वीकार कर दिया।	कभी दीवारोंको और कभी पृथ्वीको देखती रहती।	
पिताने बहुत समझाया 'हम हिन्दू थोड़े ही हैं,	उसके आँसू सूखना जानते ही न थे। उसे कुछ	
हमारे कुरानशरीफमें तो यह जायज़ है। लोग पता	अभाव था—क्या? यह तो भगवान् ही जानें।	
नहीं क्या कहेंगे। लड़का बहुत सुन्दर और पढ़ा-	(२)	
लिखा है।' पास-पड़ोसवालोंने भी आग्रह किया।	आगरेमें प्रसिद्ध रामायणी महात्मा जनकसुताशरण-	
भाईने डराने-धमकानेमें भी कोई बात उठा न रखी।	जीकी कथाकी धूम थी। नित्य सहस्रों स्त्री-पुरुषोंकी	
पर उस लड़कीपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह अपनी	भीड़ कथामें होती थी। कथाके अतिरिक्त समयमें भी	
बातपर अड़ी ही रही।	महात्माजीको दर्शनार्थी भक्तोंका समूह घेरे ही रहता	
जब कोई बहुत कहता तो वह चुपचाप सिर	था। नगरकी गली-गलीमें महात्माजीकी कथाकी चर्चा	
नीचा करके रोने लगती। वैसे भी वह आजकल	थी। आजकल सभी लोग कथाकी ही बातचीत करते	
दिनभर किसी चिन्तामें रहती थी। नमाज पढ़नेमें मन नहीं लगता था। बहुत आग्रह करनेपर तो मसजिदमें जाती और वहाँ भी बैठी-बैठी आँसू बहाया करती। शरीर दिन-दिन सूखता जाता था। मुख पीला पड़ गया था। डॉक्टरसाहबके यह एक ही लड़की थी। वे	रहते थे। बच्चोंने तो कथाकी चौपाइयाँतक स्मरण कर ली थीं और उन्हींको वे दुहराया करते थे। जमीरनको भी कथाका समाचार मिल चुका था। मुसलमान होनेपर भी उसमें साम्प्रदायिक संकीर्णता न थी। 'जब सब लोग कथाकी इतनी प्रशंसा करते हैं तो	
इसे बहुत प्यार करते थे। लड़कीकी दशासे उन्हें	मैं भी एक दिन जाऊँ।' उसने किसीसे भी बतलाया	
बड़ी चिन्ता रहती थी। पर करते भी क्या? कोई	नहीं। बुरका डालकर अकेली ही घरसे निकल पड़ी।	
उपाय चलता न था।	पड़ोसीके घर जाकर, जो जातिका वैश्य था, उसकी	
वैद्य आये, डॉक्टर आये, हकीम आये। सबने	स्त्रीके साथ कथामें चली गयी और पीछे स्त्रियोंके साथ	

भाग ९१ बैठ रही। सबका अधिकार है। रघुनाथजी केवल हिन्दुओंके ही कथामें किसे पता कि कौन आया और कौन थोड़े हैं, वे तो सबके हैं।' महात्माजीने एक छोटी-गया। सब लोग कथा-सुधाके पानमें तल्लीन थे। सी मानसकी प्रति लाकर उसे दे दी। 'इसे नित्य पूर्ण निस्तब्धता छायी हुई थी। पढ़ती रहो और राम-राम कहती रहो।' प्रसंग था श्रीरघुनाथजीके वनवासके समयका जमीरनने झुककर महात्माजीके चरणोंमें मस्तक केवटका वार्तालाप। महात्माजीकी वाणीने प्रसंगमें और रखा। उसने मन-ही-मन महात्माजीको अपना गुरु भी आकर्षण भर दिया था। श्रोताओंमें ऐसा एक भी चन लिया। व्यक्ति न था जिसके नेत्र सूखे हों। करुणरसकी उसी दिनसे जितने दिनतक महात्माजी आगरेमें धारा चल रही थी। रहे, वह नित्य कथामे आती रही। कथाके आरम्भमें महात्माजीने प्रसंगवश भक्त रसखान और सदन आती और कथाके समाप्त होनेपर उठकर चली जाती। कसाईकी कथा भी सुनायी और केवटकी भक्ति तथा श्रीरघुनाथजीकी उदारता एवं दयाका स्पष्ट चित्र घरके और मुहल्लेके मुसलमानोंने बड़ा हल्ला-श्रोताओंके सम्मुख रख दिया। गुल्ला मचाया कि जमीरन तो काफिर हो गयी। बात वक्ता स्वयं कथामय हो रहे थे। उनके नेत्रोंसे कुछ नहीं थी, वह नमाज पढ़ने अब नहीं जाती थी और दो अविरल धाराएँ निकलकर मानसके पृष्ठोंको स्नान हिन्दुओंकी रामायण दिनभर पढ़ा करती थी। उसने करा रही थीं। वे बार-बार गला भर जानेसे बीचमें मांसभक्षण भी छोड़ रखा था। रुक जाते और नेत्र पोंछकर फिर बोलने लगते। डॉक्टरसाहब क्या करते? लड़कीका मोह छोड़ा समय हो गया था और प्रसंगकी गम्भीरतासे नहीं जाता था। डर था कि अधिक कडाई करनेपर वह वक्ताका कण्ठ अवरुद्ध हो गया था। कोई नहीं रो-रोकर बीमार न हो जावे और समाजके मुसलमान चाहता था कि कथा बन्द हो, पर वक्ताने श्रोताओंके उनके पीछे पड़े हुए थे। अन्तत: उन्होंने लोगोंसे स्पष्ट आग्रहपर भी शेष प्रसंग कलके लिये छोड़कर कथाका कह दिया कि मैं लड़कीकी इच्छामें बाधा नहीं डालूँगा। विश्राम किया। आरती हुई, प्रसाद वितरण हुआ। समाज तो ऐसे ही चलता है। लोगोंने कुछ दिन लोग अपने-अपने घरोंको लौटने लगे। तो बहुत व्यंग्य कसे और फिर जैसे-जैसे बात पुरानी वह वैश्य-स्त्री उठी और जमीरनसे चलनेको पडती गयी, उसे भूल गये। उनके लिये विशेषसे वह कहने लगी। जमीरनने उसे रोका। तनिक अवसर साधारण बात हो गयी और सब तो शान्त हो गये, पर मिला, वे दोनों महात्माजीके चरणोंमें प्रणाम करके जमीरनकी भाभी और भाई शान्त नहीं हुए। वे बराबर एक ओर खड़ी हो गयीं। महात्माजीने पूछा 'क्या उसके पीछे पडे थे। भाईका कहना था कि 'वह शादी पूछना है?' कर ले और काफिरोंकी इस पुस्तकको फेंक दे।' भाभी 'आप जिस पुस्तकसे कथा कहते थे, उसे क्या उसके मांस न खानेसे चिढती थी और उसे व्यंग्यमें मैं पढ़ सकती हूँ?' जमीरन वैसे हिन्दी अच्छी प्रकार 'भगतिन' कहकर पुकारती थी। पढ लेती थी। पिताकी उदारता और प्रेमने जमीरनको सुविधा दे 'क्यों इसमें क्या आपत्ति है?' महात्माजीने रखी थी। पिताके भयसे भाई अधिक उद्दण्डता नहीं कर साश्चर्य कहा। दूसरी स्त्रीने बतलाया 'ये मुसलमान पाता था। किसी प्रकार दिन कटते जाते थे। हैं।' जमीरनका मन इस परिवारसे ऊबता ही गया। उसे Hinduism Disaord Sessifer https://dac.gg/dhatma पिर्धिकिक्त के पिर्धिकिक कि का मानवार के कि प्रमान के कि कि कि

संख्या १२] पगर्ल	ो माई २३
********************************	**************************************
उनके साथ रहना। उसे यहाँ रहकर अपने जप और	कि पगली माई आगरेकी रहनेवाली है।
पाठमें भी कम अड़चन नहीं पड़ती थी।	वह किसीसे कुछ बोलती नहीं थी। प्रात: नगरके
उसके लिये मांसको पकते और दूसरोंको भक्षण	बाहरसे आती और आकर किसी पेड़के नीचे बैठ जाती।
करते देखना भी असह्य हो गया। वह घरमें मांस आनेपर	लोग आकर उसे घेर लेते, दर्शन करते, फल उसके सामने
कोठरी बन्द करके बैठ रहती। वह दिन दूध और फलपर	रख देते।
काट देती। महीनेमें बीस दिन ऐसे ही बीतते।	पगली माई कभी फलोंको लोगोंकी ओर फेंक देती
धीरे–धीरे उसका अयोध्याकी ओर आकर्षण हुआ।	और कभी उन्हें वहीं छोड़कर किसी दूसरे पेड़के नीचे जा
कई बार उसने अयोध्या जानेका विचार भी किया, पर	बैठती। किसीने नहीं देखा कि वह भोजन क्या करती है।
पिताके प्रेमको तोड़कर जाना भी उसके लिये शक्य न था।	जिसपर वह बहुत प्रसन्न होती, उसकी ओर देखकर
आकर्षण बढ़ता गया और वह अयोध्या जानेके	केवल हँस देती, कोई सांसारिक वस्तुओंकी कामना करता
लिये व्याकुल रहने लगी। जिसे भगवान् स्वयं बुलाना	तो वह पृथ्वीपर थूक देती। कोई बहुत तंग करता तो
चाहें, उसे रोक कौन सकता है! आगरेमें हैजा फैला और	उठकर वहाँसे चल देती।
उसने डॉक्टर साहबको ले लिया।	पता नहीं लगा कि पगली माई रात्रिको कहाँ रहती
घरमें सब लोग रो रहे थे, सब पछाड़ें खा रहे थे	है। सन्ध्या होते ही वह नगरसे बाहरकी ओर चल देती।
और जमीरनके नेत्रोंमें अश्रु भी न थे। उन्मत्त दृष्टिसे वह	कई बार लोगोंने पीछा किया, पर उन्हें जब कई मील
आकाशकी ओर एकटक देख रही थी।	चलना पड़ा तो हारकर लौट आये। अनुमान यह था कि
डॉक्टरसाहबके इष्ट-मित्र सभी आ गये थे।	वह कहीं सरयू-किनारे रहती होगी।
फूलोंसे सजा हुआ शव कब्रगाहके लिये उठाया गया।	माई दिनभर अस्पष्ट ध्वनिमें सर्वदा कुछ कहा करती
जमीरन उठी और उस शवके साथ हो ली। लोगोंने बहुत	थी। उसके पास एक रामायणका गुटका भी रहा करता
लौटानेकी चेष्टा की, पर वह लौटी नहीं।	था। पर उसे पाठ करते या पुस्तक खोलते किसीने देखा नहीं।
शवको कब्र दे दी गयी। लोग ऊपर पुष्प चढ़ाकर	दिनमें केवल एक बार वह कनकभवन जाती और
लौटे। पता नहीं कब जमीरन वहाँसे चली गयी थी।	भवनके सबसे बाहरी द्वारपर मस्तक टेककर चुपचाप लौट
सबने समझा कि घर लौट गयी होगी। पर वह घर नहीं	जाती। यही उसका नित्य क्रम था।
आयी थी।	ठीक रामनवमीके उत्सवकी भीड़में जब पगली
सन्ध्याको एक बार फिर एक मुसलमानने कब्रके	माईने मन्दिरकी देहलीपर मस्तक रखा तो वह फिर नहीं
पास अकेली जमीरनको देखा और फिर किसीने उसे	उठ सकी। बहुत देर बाद लोगोंका ध्यान उधर गया।'जय
आगरेमें कभी नहीं देखा। भाईने बहुत चेष्टा की, पर	सीताराम सीताराम सीताराम' की ध्वनिके मध्यमें बड़ी
जमीरनका उन्हें पता न लगा। पाँच सौ रुपयेके पुरस्कारकी	श्रद्धासे पगली माईकी सजी हुई अरथी वैष्णवोंने कन्धेपर
घोषणा भी कोई फल नहीं दिखला सकी।	रखी। अब भी वह रामायणजीका गुटका साथ था।
(8)	भक्तोंने उस साकेतकी पगलीके शरीरको सरयूजीकी
अयोध्यामें एक वृद्धा मुसलमान-स्त्री पगली माई	परमपावन गोदमें समर्पित कर दिया।
करके प्रसिद्ध हो गयी थी। वह कभी अयोध्या रहती	आजतक वैष्णवोंमें पगली माईका बड़े आदरके
और कभी लखनऊ आ जाती थी। लोगोंकी उसपर बड़ी	साथ स्मरण किया जाता है। महात्मालोग उसका दृष्टान्त
श्रद्धा थी। लोग उसे घेरे ही रहते थे। किसीने बताया	श्रेष्ठ भक्तोंकी चर्चा चलनेपर दिया करते हैं।
	>+>

अनन्य शरणागति (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी) श्रीमद्भगवद्गीताके सप्तम अध्यायके प्रथम श्लोकमें लगा और मुझमें ही बुद्धिको भी लगा"। 'मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि।' (गीता १८।५८)

भगवान् श्रीकृष्णने अपने समग्र रूपसे अर्जुनको अवगत अर्थात् मुझमें चित्तवाला होकर तू मेरी कृपासे समस्त

करानेहेतु कहा—'मय्यासक्तमनाः पार्थ युञ्जन्मदाश्रयः। असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छुणु॥' अर्थात् हे पार्थ! अनन्य प्रेमसे मुझमें आसक्तचित्त तथा अनन्य भावसे मेरे परायण होकर

योगमें लगा हुआ तू जिस प्रकारसे सम्पूर्ण विभूति, बल, ऐश्वर्यादि गुणोंसे युक्त, सबके आत्मरूप मुझको संशयरहित जानेगा, उसको सुन।

अपने उपदेश-क्रममें भगवान् श्रीकृष्णने अन्यत्र अनेक स्थलोंपर चित्तको अपनेपर तन्मयतापूर्वक केन्द्रित

करनेपर विशेष बल दिया है। उन्होंने अपने श्रीमुखसे जितेन्द्रिय पुरुषकी चित्त-वृत्तिको अपनेमें निरन्तर लगानेको आत्मज्ञान एवं ब्रह्मज्ञानका अनिवार्य सोपान माना है। अन्त:करणको प्रभु-चरणोंमें सर्वान्तर भावसे नियोजित

करनेके आध्यात्मिक महत्त्वको रेखांकित करते हुए भगवान् श्रीकृष्णने अनेक प्रसंगोंमें घोषणा की है, यथा—'अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।' (गीता ९।२२) अर्थात् जो अनन्य प्रेमी भक्तजन

मुझ परमेश्वरको निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भावसे भजते हैं । 'मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।' (गीता ९।३४) श्रीभगवान् बोले—

हे अर्जुन! मुझमें मनवाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करनेवाला हो तथा मुझको प्रणाम कर। 'मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।""' (गीता १०।९) अर्थात् निरन्तर मुझमें मन लगानेवाले और मुझमें ही

प्राणोंको अर्पण करनेवाले भक्तजन मुझमें ही निरन्तर रमण करते हैं। 'मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।' (गीता १२।२) अर्थात् मुझमें मनको एकाग्र करके निरन्तर मेरे भजन-ध्यानमें लगे हुए भक्तजन...

संकटोंको अनायास ही पार कर जायगा। उपर्युक्त सभी श्रीवचनोंमें भगवान् श्रीकृष्णने मनकी

> एकाग्रता, तन्मयता, एकोन्मुखता तथा अपने प्रति पूर्ण समर्पणके महत्त्वको स्पष्ट किया है। इस संक्षिप्त लेखमें श्रीमुखसे निकले श्लोकके

प्रारम्भिक दो शब्दों अर्थात् 'मयि' तथा 'आसक्तमनाः' पर प्रकाश डालनेका प्रयास किया गया है। अस्तु, पहले जीवके मनकी थोड़ी व्याख्या अभीष्ट है। यह तो सर्वविदित ही है कि मानव मन वायुके समान ही अत्यन्त चंचल, अस्थिर तथा भ्रमणशील है। मन

स्वभावत: कभी भी, कहीं भी क्षणभरके लिये भी स्थिर नहीं रहता, जैसा कि अर्जुनने ठीक ही कहा है, यथा—'चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बल-वद्दृढम्। तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥' (गीता ६।३४) हे श्रीकृष्ण! यह मन बड़ा चंचल,

प्रमथन स्वभाववाला, बड़ा दृढ़ और बलवान् है। इसलिये उसको वशमें करना मैं वायुको रोकनेकी भाँति अत्यन्त दुष्कर मानता हूँ। अर्जुनके इस कथनकी

पुष्टि भगवान् स्वयं इन शब्दोंमें करते हैं—'**असंशयं** महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।' (गीता ६।३५) हे महाबाहो! नि:सन्देह मन चंचल और कठिनतासे वशमें होनेवाला है। भगवान्ने आगे भी कहा है—

भाग ९१

'असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मितः।' (गीता ६।३६) अर्थात् जिसका मन वशमें किया हुआ नहीं है, ऐसे पुरुषद्वारा योग दुष्प्राप्य है। तात्पर्य यह कि मनोनिग्रह अत्यन्त कठिन तथा

दुष्कर है। इसके अतिरिक्त मनकी एकाग्रता तथा एकोन्मुखता भी बहुत दुस्साध्य है। इस सन्दर्भमें ध्यातव्य है कि मानव-जीवनमें मनका बडा महत्त्व है। वास्तवमें

इत्यादि। 'मय्येव मन आधत्स्व मिय बुद्धिं निवेशय।' (गीता १२।८) अर्थात् श्रीभगवान् बोले—मुझमें मनको

संख्या १२] अनन्य श	रणागति २५
**************************************	**************************************
जीवनकी सार्थकता मनके संयमन-नियमन तथा	बिसारि सहज सुख, जहँ तहँ इंद्रिन तान्यो॥'
निर्देशनपर बहुत कुछ निर्भर है; क्योंकि मन ही मनुष्यके	(वि॰प॰ ८८) तात्पर्य यह है कि विषयासक्त मन
बन्धन तथा मोक्षका कारण है, यथा 'मन एव	जीवको सांसारिक माया-मोह तथा प्रलोभनमें जकड़कर
मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः। ' (मैत्राण्युपनिषद्	निष्कर्षतः उसे आवागमनके बन्धनमें बाँध देता है।
४।११)। निरन्तर संकल्प तथा विकल्पकी	गोस्वामी तुलसीदासजीने 'श्रीरामचरितमानस' के
द्वन्द्वात्मक स्थितिमें सदा चलायमान रहनेवाले मनको	उत्तरकाण्डमें अनेक मानस-रोगोंकी विस्तृत चर्चा की
वशमें करना तथा उसे परमात्माके चरणोंमें दृढ़तापूर्वक	है। काम, क्रोध, मद, मोह आदि अनेक मानस-
निरन्तर लगाना किन्हीं विरले महापुरुषोंके लिये ही	रोगोंसे संसार ग्रस्त है। जब एक व्याधि ही मनुष्य-
सम्भव है।	जीवनका अन्त कर सकती है, तो भला ये अनेक
वस्तुत: मनको हम उस सरोवरके समान कह	मानसिक व्याधियाँ उसे निरन्तर घेरकर क्यों न घोर
सकते हैं, जिसमें विचाररूपी वायु कामनाओंकी असंख्य	यातनाएँ देती रहें? 'एक व्याधि वस नर मरहिं ए
ऊर्मियाँ (लहरें) निरन्तर उत्पन्न करती रहती है।	असाधि बहु ब्याधि। पीड़हिं संतत जीव कहुँ सो
इन अनेकानेक कामनाओं एवं आकांक्षाओंके समूहको	किमि लहै समाधि॥' (रा०च०मा० ७।१२१क)
हम आसक्तिकी संज्ञा दे सकते हैं। वास्तवमें आसक्तिके	सारांश यह है कि विषयोंका सर्वथा परित्यागकर,
मूलमें ममता (राग) विद्यमान रहती है अथवा हम	मनकी शुद्धि करके उसे प्रभु (भगवान्)-की ओर
यों कहें कि ममता आसक्तिकी जननी है। मानव	उत्प्रेरित करना तथा उन्हींके श्रीचरणोंमें टिका देना
मन स्वाभाविक रूपसे अनगिनत आसक्तियोंसे	ही मनोविजयकी सच्ची साधना है। मनका काम्य ही
सदैव अच्छादित रहता है। ममता-मोह, राग-द्वेष,	है निर्विषय होकर भगवत्परायण होना। मनकी
संकल्प-विकल्प आदि अनेक द्वन्द्वों एवं आसक्तियोंसे	निष्कपटता तथा पूर्ण निर्मलता प्रभुतक पहुँचनेका साधन
पूर्णतया घिरे रहनेके कारण मानव-मन परमात्माकी	है। गोस्वामीजी लिखते हैं कि प्रभु श्रीरामकी स्पष्ट
ओर उन्मुख ही नहीं हो पाता; फिर भला प्रभु-	घोषणा है—'निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
चरणोंमें आसक्त होना तो बहुत दूरकी बात है।	मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥' (रा०च०मा०
लौकिक आकर्षणों तथा मोहक आसक्तियोंका परित्याग	५।४४।५) अर्थात् जो मनुष्य निर्मल मनका होता
मनुष्यको स्वतः ईश्वरके प्रति आकृष्ट कर देता है।	है, वही मुझे पाता है। मुझे कपट और छल-छिद्र
सद्गति पानेहेतु विषय-वासनाओंका निर्मूलन तथा शुभ	नहीं सुहाते। गोस्वामीजीने मनके विकारोंको भेद-
संकल्पोंका पोषण अत्यावश्यक है। शुभ विचारोंकी	भावजनित अपार दु:ख, भ्रम और भारी शोकका मुख्य
ओर अभिप्रेरित करनेहेतु ही हमारे तत्त्वज्ञ वैदिक	कारण माना है, यथा—
ऋषियोंने 'तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु' की कामना	जौ निज मन परिहरै बिकारा।
की थी।	तौ कत द्वैत-जनित संसृति-दुख, संसय, सोक अपारा॥
मनकी सहज या स्वाभाविक प्रवृत्ति है विषयोंमें	(वि०प० पद १२४।१)
आसक्त होना। अपनी स्वाभाविक अस्थिरताके कारण	गोस्वामी तुलसीदासजीने 'श्रीरामचरितमानस' में
मन कभी भी जीवको विश्राम नहीं लेने देता। अतिशय	कतिपय प्रमुख भौतिक आकर्षणोंका (जिन्हें 'आसक्ति'
चंचल मनवाले व्यक्तिको भला विश्राम कहाँ? इस	की संज्ञा दी गयी है)-का वर्णन स्वयं भगवान् श्रीरामके
विषयमें गोस्वामी तुलसीदासजीकी स्वीकारोक्ति द्रष्टव्य	श्रीमुखसे उस समय करवाया है, जब विभीषण प्रभुकी
है—'कबहूँ मन बिश्राम न मान्यो। निसिदिन भ्रमत	शरणमें उपस्थित होता है, यथा—

है और जिसके मनमें हर्ष, शोक और भय नहीं है-(रा०च०मा० ५।४८।४) ऐसा सज्जन मेरे हृदयमें वैसे ही बसता है, जैसे लोभीके हृदयमें धन बसा करता है। उपर्युक्त विवरणमें विविध आसक्तियोंका उल्लेख है, जिनके अतिरिक्त अन्य भी अनेक आकर्षण हैं,

भगवान्ने कहा—हे विभीषण! माता, पिता, भाई,

जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा॥

तथा अन्य अनेक आकर्षणोंसे सर्वथा विरक्त होकर जो व्यक्ति मेरे चरणोंमें पूर्णतया समर्पित हो जाता है, वह मुझको प्राप्त कर लेता है; मेरा अत्यधिक प्रिय पात्र बन जाता है। प्रभुने आसक्तियोंसे निवृत्तिका उपाय बताते हुए कहा— सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि डोरी॥

पुत्र, स्त्री, शरीर, धन, घर, मित्र और परिवार—ये दस प्रमुख

आसक्तियाँ जीवमात्रको बन्धनमें जकडे रहती हैं। इन सभी

(रा०च०मा० ५।४८।५-७) प्रभु श्रीराम बोले कि इन सब (उपर्युक्त आसक्तियों)-

समदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरष सोक भय नहिं मन माहीं॥

के ममतारूपी तागोंको बटोरकर और उन सबकी एक डोरी बटकर उसके द्वारा जो अपने मनको मेरे चरणोंमें बाँध देता है अर्थात् सारे सांसारिक सम्बन्धोंका केन्द्र मुझे

अस सज्जन मम उर बस कैसें। लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें॥

प्राप्त कर देता हूँ। प्रभु श्रीरामने भी विभीषण-

होना चाहिये।

अनन्यप्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वरको निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्कामभावसे भजते हैं, उन नित्य-निरन्तर मेरा चिन्तन करनेवाले पुरुषोंका योगक्षेम मैं स्वयं

नित्य-निरन्तर चिन्तन करनेवाले श्रेष्ठ भक्तजनोंके लिये

परमात्माका पूर्ण आश्वासन है—'अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां

योगक्षेमं वहाम्यहम्॥' (गीता ९।२२) अर्थात् जो

बना लेता है, जो समदर्शी है, जिसे कुछ भी इच्छा नहीं

जो मनको भगवान्से विमुख करते हैं। ध्यातव्य है कि विषयासक्त मन जीवको बाँधता है और निर्विषय मन उसे मुक्ति प्रदान करता है। मानव मनका परम तथा चरम लक्ष्य है आभ्यन्तर वृत्तिका पूर्णतया भगवद्मय हो जाना; प्रभुके प्रति सर्वतोभावेन अनुरक्त होकर समर्पित हो जाना। ऐसी स्थितिको ही भगवान् श्रीकृष्णने 'मय्यासक्तमनाः' की संज्ञा दी है। संशयरहित होकर अनन्य भावसे प्रभुके प्रति पूर्ण आसक्ति रखनेवाले तथा निष्काम भावसे परमेश्वरका

शरणागतिपर यही आश्वासन दिया था-सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।

अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम॥ (वा॰रा॰ ६।१८।३३)

अतएव हम सभीको अनन्य भावसे प्रभुके चरणोंमें पूर्णरूपेण आसक्त होकर परम कल्याणकी ओर अग्रसर

िभाग ९१

शरण सफलताकी कुंजी है, निर्बलका बल है, साधक का जीवन है, प्रेमीका अन्तिम प्रयोग है, भक्तका महामन्त्र है, आस्तिक का अचूक अस्त्र है, दुखीकी दवा है, पिततकी पुकार है। वह निर्बलको बल, साधकको सिद्धि, प्रेमीको

प्रेमपात्र, भक्तको भगवान्, आस्तिकको अस्ति, दुखीको आनन्द, पतितको पवित्रता, भोगीको योग, परतन्त्रको स्वातन्त्र्य, नमझनो ता इन्हान स्वायन स्वयं मार्ग के होतान स्वयं मार्ग के स्वयं सम्बद्धाः स

'रास रच्यौ बन कुँवर-किसोरी' संख्या १२] 'रास रच्यौ बन कुँवर-किसोरी' (डॉ० श्रीमती नीरूजी रस्तोगी) रसेश्वर कृष्णके वेणुनादको सुनकर कौन ऐसा हृदयहीन मुरली सुनत भई सब बौरी होगा, जो उनके रसात्मक आवाहनको नकारकर उनके छूटि सब लाजि गई कुल कानी । सुनि पति-आरज-पन्थ भुलानी।। निकट न आये। उसको आना ही होगा; क्योंकि रासलीला मुरलीके प्रति ब्रजांगनाओंके उपालम्भ उनके हृदयकी परात्पर ब्रह्मकी अपनी जीवात्माओंको लौकिक धरातलसे प्रेमाभक्तिकी सजीवताको प्रकट करते हैं। कृष्णके मुरली-पराङ्मुख करके स्वानन्दमें आकण्ठ सराबोर करनेकी लीला प्रेमके कारण गोपांगनाएँ आपसमें अनेक प्रकारकी चर्चा है। आनन्दका नाम ही रस है और ब्रह्मके लिये 'रसो वै करती हैं और उसको सपत्नीके रूपमें मानने लगती हैं— सः ' कहा जाता है। 'स एकाकी न रमते' ऐसा श्रुतियोंमें मुरली तऊ गोपालहि भावति। कहा गया है। वह अकेले कैसे रमण करे ? इसीलिये उन सुन, री सखी! जदिप नंदनंदिह नाना भाँति नचावित॥ ब्रह्माण्डनियन्ता श्रीकृष्णने द्वितीय स्वरूप अर्थात् स्वयंसे राखित एक पाँव ठाड़े करि अति अधिकार जनावित। ही नि:सुत अपने ही रसात्मक स्वरूप व्रजांगनाओंकी आपुन पौढ़ि अधर सञ्जा पर कर पल्लव सों पद पलटावित॥ इच्छा की। फलस्वरूप स्वच्छ शरच्चिन्द्रका-धौत—निर्मल भ्रकुटी कुटिल, कोप नासापुट हम पर कोप जनावति। विभावरीमें जब रास प्रारम्भ होनेसे पूर्व मोहनका वेणुवादन रास-रस-आवेष्टित गोपकन्याओंके स्वरूपका होता है, तब ब्रज-गोपिकाएँ अपने समस्त लौकिक आधानोंको अनुदर्शन आचार्योंने बृहद्वामनपुराणमें साक्षात् श्रुतिरूपा

त्यागकर शीतल-मन्द-सुगन्ध समीरसे मादक-तरंग-संकुल यमुना-तटपर जा पहुँचती हैं। ये कृष्णकी चिर-विरहिणी

नायिकाएँ हैं। जैसे ही अंश अपने अंशीसे बिछुड़ता है, उसका हृदय मिलनके लिये सदा-सर्वदा तड्पता रहता है-जब मोहन मुरली अधर धरी। गृह व्यवहार थके आरज पथ तजत न संक करी।

पद-रिपु पट अट्क्यो आतुर ज्यों उलटि पलटि उबरी॥

देह-दशा बिसर जाती है-

साथ रमणकी इच्छा ही नहीं करते हैं, वे उनकी स्वयम्भूता अंगी, संगी एवं रंगी हैं। इसीलिये उनकी रसमयी लीलाओंका एकमात्र अधिष्ठान या तो वे स्वयं हैं या उनकी निजस्वरूपभूता गोपीजन और आह्लादिनी शक्तिस्वरूपा रासेश्वरी श्रीराधाजी। रासलीला भगवान्

न स्त्रियो ब्रजसुन्दर्यः पुत्र ताः श्रुतयः किल। नाहं शिवः शेषश्च श्रीश्च ताभिः समाः क्वचित्॥ षष्टिवर्षसहस्राणि मया तप्तं तपः पुरा। तथापि न मया प्राप्ताः तासां वै पादरेणवः॥

अर्थात् 'ब्रजकी रमणियाँ साधारण स्त्रियाँ नहीं हैं।

रसात्मा कृष्ण गोपांगनाओंके अतिरिक्त अन्य किसीके

ये तो श्रुतियाँ ही हैं अर्थात् श्रुतियाँ गोपियोंका रूप धारणकर ब्रह्मके साथ रमती थीं। न मैं, न शिव, न शेष या न लक्ष्मीजी भी उनके बराबर नहीं हैं। पूर्वकालमें साठ हजार वर्षतक मैंने तपस्या की, तब भी उनका पद-

श्रीकृष्णकी भूमण्डलके जीवोंको रसमयता प्रदान करनेकी इसीलिये उन गोपिकाओंके कर्णपुट निर्जीव मुरलीके मधुरनादके रससे जब आप्लावित होते हैं, तब उनकी अत्यन्त दिव्यातिदिव्य लीला है। 'रास' शब्दका मूल अर्थ 'रस' है और रसस्वरूप

गोपीजनके रूपमें किया है-

रज भी मुझे नहीं मिल सका।'

भगवान् श्रीकृष्ण ही हैं। जिस दिव्य क्रीडामें एक ही रस मानो माई घन-घन अन्तरदामिनि। अनेक रसोंमें रूपान्तर धारण करता हुआ अनन्त रसोंका घन दामिनि दामिनि घन अन्तर शोभित हरि ब्रज भामिनि॥ समास्वादन करे तथा रस-समृहमें प्रकट होकर स्वयमेव यमुना पुलिन मल्लिका मुकुलित शरद सुहाई जामिनि। आस्वाद्य-आस्वादक लीला धाम और विभिन्न लीलायुक्त सुन्दर राशि गुण रूप राशि निधि आनन्द मन विश्रामिनि॥ आलम्बन एवं उद्दीपनके रूपमें क्रीड़ा करे, उसीका नाम रच्यौ रास मिल रसिकराय सौं मुदित भई ब्रज भामिनि। 'रस' है। भगवान् श्रीकृष्णकी यह लीला गोलोकके रूप निधान श्यामघन सुन्दर अंग-अंग अभिरामिनि॥ दिव्य धाममें दिव्य रूपमें निरन्तर हुआ करती है। खंजन मीन मयूर हंस पिक भई भेद गज गामिनि। भगवान् श्रीकृष्णका वेणुनाद जड़को चेतन, चेतनको कौतुक घने सूर नागर संग काम विमोह्यो कामिनि॥ जड़, विक्षिप्तको समाधिस्थ एवं समाधिस्थको विक्षिप्त केलिकलासम्पूर्ण कृष्ण ब्रह्मका पूर्ण रूप तो हैं ही, बना देता है, किंतु इस रास-रसकी अधिष्ठात्री कौन हैं? साथ ही रसराज शृंगारके एकमात्र अधिष्ठान भी हैं। श्रीकृष्णकी आत्मभूता श्रीराधाजी, जो कि श्रीकृष्णकी भगवान् श्रीकृष्ण गीताजीमें स्वयं कहते हैं-राससे सम्बन्धित समस्त क्रियाकलापोंकी शिक्षिका हैं— बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम्। धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ॥ सिखवत हरि को मुरली बजावन। सप्तरंध्र पर धरत अंगुरीदल कंध बाहुधर मधुरे गावन॥ 'हे भरतश्रेष्ठ! मैं बलवानोंका आसक्ति और सरस भेद जित राग कान्हरो गित विलास वर नयन नचावन। कामनाओंसे रहित बल अर्थात् सामर्थ्य हूँ और सब भूतोंमें धर्मके अनुकूल अर्थात् शास्त्रके अनुकूल काम हूँ। कृष्णदास बल-बल वैभवकी गिरिधर पिय प्यारी मनभावन॥ इसीलिये कृष्णरसमें डूबी गोपियाँ जिनका भूतलपर सम्पूर्ण ब्रह्माण्डको नचानेवाले श्रीकृष्णको रासमें नृत्यकी शिक्षा रासेश्वरी श्रीराधाजी ही देती हैं; क्योंकि अवतरण एकमात्र उनको प्राप्त करनेके लिये हुआ था रास-रसकी वास्तविक भोग्या और आयोजिका वे ही हैं, उनके आवाहनपर तत्काल आनन्दरूपमें सराबोर होनेहेतु जो कि सकल गुण और कला-प्रवीणा हैं। इसलिये रासकी दौड़ पड़ती हैं। नृत्यका ऐसा अद्भुत समाँ बँधता है कि संकल्पना और आयोजनमें उन्हींकी मुख्य सहभागिता है— जड-चेतन सभी उस रसमें डूब जाते हैं। नाद ब्रह्मके साकार रूप सांगीतिक वाद्य यन्त्रोंके साथ रासका रस पिय को नचवन सिखवत प्यारी। अलौकिक हो जाता है-वृन्दावन में रास रच्यो है शरद रैन उजियारी॥ ताल मृदंग उपंग बजावत अति प्रवीन ललिता री। रास रच्यौ बन कुँवर-किसोरी। मंडल-विमल-सुभगवृन्दावन, जमुनापुलिन स्याम-घनघोरी। रूप भरी गुण हाथ छरी लिए डरपत लाल बिहारी॥ वीणा वेणु नूपुर ध्वनि बाजत खगमृग बुद्धि बिसारी। बाजत बैंन, रबाब, किन्नरी, कंकन, नूपुर, किंकिनि-सोरी॥ 'व्यास' स्वामिनी की छवि निरखत रीझ देत करतारी॥ तत-थेई, तत-थेई सबद उघटत पिय, भले बिहारि-बिहारिन जोरी। रास-लीला स्थलशोधिका श्रीयमुना हैं, उनके वरहा-मुकुट चरन-तट आवत, धरैं भुजन मैं भामिन कौं री। तटबन्ध कृष्णकी कामदेवपर विजयलीलाके क्रीडास्थलके आलिंगन, चुम्बन, परिरम्भन, 'परमानन्द' डारत तून तोरी॥ साथ ही मूक सूचक भी हैं। श्रीकृष्णका सर्वाधिक प्रिय निःसन्देह ब्रजांगनाओंके साथ श्रीकृष्णकी यह स्थल वृन्दा विपिनमें स्थित वंशीवट है, जो कि अनादिकालसे लीला उनकी निष्काम स्नेहसिक्त आत्माओंका कृष्ण-उनकी लीलाका साक्षी और सहचर है। गोपांगनाएँ और रसमें आप्लावित होकर देहानुसन्धान एवं लौकिकावेशसे निर्मुक्त होकर अखण्ड आनन्दस्वरूप परमात्माके रसमें श्रीकृष्ण घनमें विद्युत् तरंगोंकी भाँति एक-दूसरेमें संग्रथित हैं। क्या जीवात्मा और ब्रह्मकी स्थिति भी ऐसी नहीं है, डूबना ही है। मानव देहधारियोंके जीवनका परम ध्येय

भी आनन्द-प्राप्तिके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है।

अर्थात् ऐसी ही है-

भाग ९१

'प्रणव'की उपासना* (डॉ० श्री के० डी० शर्माजी) मनुष्य योनि परमात्माकी श्रेष्ठतम कृति है। महर्षि अर्थात् भौतिक कामनाओंका त्याग कर देनेसे साधक वेदव्यासके अनुसार 'न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि चेतनाके उच्च स्तरपर स्थित हो जाता है तथा इस जीवनमें किञ्चित्' अर्थात् मनुष्यसे श्रेष्ठ अन्य कोई प्राणी अमृतस्वरूप हो जाता है, निश्चित ही, इतना ही अनुशासन नहीं है। मनुष्यकी श्रेष्ठता उसमें विवेक शक्ति होनेके (उपदेश) है। उपदेशके अन्तमें अनुशासन दिया जाता है। कारण है। मनुष्यमें ईश्वरीय प्रज्ञा प्राप्त करनेकी सामर्थ्य कठोपनिषद् (१।२।२३) तथा मुण्डकोपनिषद् है। सौभाग्यसे श्रोत्रिय (वेदज्ञ) तथा ब्रह्मनिष्ठ गुरु (३।२।३)-में कहा गया है कि 'परब्रह्म परमात्मा न मिल जाय तो मनुष्य पूर्णत्व प्राप्त कर सकता है। तो प्रवचनसे, न बुद्धिसे और न ही बहुत श्रवणसे ही यदि सद्गुरु नहीं मिले तो 'कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्'के प्राप्त हो सकता है। यह जिसे स्वीकार कर लेता है, उसको ही प्राप्त हो सकता है तथा उसके प्रति परमात्मा अनुसार भगवान् श्रीकृष्णको ही गुरुरूपमें धारणकर सद्शास्त्रोंका अध्ययन करना चाहिये। अपना यथार्थ स्वरूप प्रकट कर देता है।' परमात्माकी शास्त्रोंके अनुसार सर्वप्रथम यह स्वीकार करना चाहिये दिव्यानुभूति प्राप्त करनेके लिये उत्कट इच्छा, चित्तकी कि 'परमात्मा है'। कठोपनिषद् (२।३।१३)-के अनुसार निर्मलता और वैराग्यभाव साधकको भगवत्कृपाका अधिकारी 'वह परमात्मा है और वह साधकको प्राप्त होता है'—इस बना देते हैं। विश्वाससे उन्हें स्वीकार करे और तत्पश्चात् तात्त्विक मुण्डकोपनिषद् (३।२।४)-के अनुसार 'परब्रह्म विवेचनपूर्वक निरन्तर उनका ध्यान करते हुए उन्हें प्राप्त परमात्मा आत्मनिष्ठाजनित बलसे रहित, प्रमाद तथा सात्त्विक लक्षणरहित तपसे नहीं प्राप्त हो सकता, किंतु

'प्रणव'की उपासना

संख्या १२]

करना चाहिये।' परमात्माको तत्त्वभावसे जाननेका तात्पर्य है श्रुति, स्मृति तथा युक्ति आदि शास्त्रोंके श्रवण, मनन आध्यात्मिक बल, अप्रमाद तथा सात्त्विक तपसे परमात्माकी और निदिध्यासनद्वारा परमात्माके तात्त्विक स्वरूपका ज्ञान अनुभूति हो सकती है।' प्राप्त करना। अन्तमें यह मन्त्र कहता है कि 'इन दोनों केनोपनिषद् (२।५)-में कहा गया है कि 'इस प्रकारकी उपलब्धियाँ प्राप्त होनेपर परमात्माका वास्तविक मनुष्य शरीरमें परब्रह्मको जान लिया तब तो मानव-दिव्य स्वरूप साधकको प्रत्यक्ष अनुभव हो जाता है।' जन्मकी सार्थकता है। यदि नहीं जान पाया तो महान् आगेके दो मन्त्रों कठोपनिषद् (२।३।१४-१५)-में कहा विनाश अर्थात् जन्म-मृत्युरूप प्रवाहमें बहना पड़ेगा।' इस मन्त्रमें परमात्माको जाननेकी सरल विधि बतायी गया है कि 'जिस समय हृदयमें स्थित समस्त कामनाएँ नष्ट हो जाती हैं और हृदयकी अविद्याजनित सम्पूर्ण है कि सम्पूर्ण चराचर प्राणियोंमें परमात्माका साक्षात्कार ग्रन्थियों ('में यह शरीर हूँ, यह मेरा धन है, मैं सुखी हूँ, मैं करते हुए विवेकी साधक सदाके लिये जन्म-मृत्युके

दुखी हूँ, यह मेरा परिवार है 'इत्यादि)-का नाश हो जाता

है, उस समय यह मरणधर्मा मनुष्य अमर हो जाता है और 'ॐ' (ओंकार या प्रणव)-की उपासनासे इस शरीरमें ही ब्रह्मभावको प्राप्त हो जाता है।' अन्तमें परब्रह्म परमात्माकी अनुभूति—आद्यशंकराचार्यके कठोपनिषद्(२।३।१५)-में निचकेताको यमराज उपदेश अनुसार 'ॐ' यह अक्षर परमात्माका सबसे समीपवर्ती देते हैं कि 'अथ मर्त्योऽमृतो भवत्येतावद्ध्यनुशासनम्' (प्रियतम) नाम है। इसका निरन्तर उच्चारण किये जानेपर (अथ मर्त्य: अमृत: भवित हि एतावत् अनुशासनम्) परमात्मा प्रसन्न होते हैं। अत: 'ॐ' का जप, मनन तथा

* प्रणव (ओंकार)-की उपासना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, परंतु यह उपसना साधु-संन्यासी एवं विरक्तोंके लिये विशेष उपयोगी है।

सामान्यत: इस उपासनाके अधिकारी यज्ञोपवीत धारण करनेवाले द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) ही हैं।

चक्रसे छूटकर अमर हो जाते हैं।

[भाग ९१ निदिध्यासन करना, परमात्माकी उपासनाका सर्वोत्तम साधन यजुर्भिरन्तरिक्षं ऋग्भिरतं है। छान्दोग्योपनिषद्के प्रथम मन्त्र (१।१।१)–के अनुसार सामभिर्यत् तत्कवयो वेदयन्ते। 'ॐ'यह अक्षर उद्गीथ है, इसकी उपासना करनी चाहिये। तमोङ्कारेणैवायतनेनान्वेति विद्वान् 'ॐ' ऐसा उच्चारण करके उद्गाता (उच्च स्वरसे यत्तच्छान्तजरममृतमभयं परं चेति॥ कठोपनिषद् (१।२।१५, १७)-में यमाचार्य सामगान) करता है। माण्डुक्योपनिषद्के प्रथम मन्त्रमें नचिकेताको 'ॐ' की महिमाका उपदेश देते हैं कि कहा गया है कि 'ॐ यह अक्षर ही सब कुछ है। यह जो कुछ भूत, भविष्यत् और वर्तमान है, वह सब 'ॐ' 'सम्पूर्ण वेद जिस परमपदका बारम्बार प्रतिपादन करते की ही व्याख्या है, अत: यह सब ओंकार ही है। इसके हैं, समस्त तप जिस पदका लक्ष्य कराते हैं और जिसको अतिरिक्त जो अन्य त्रिकालातीत वस्तु है, वह भी ओंकार पानेकी इच्छासे साधकगण ब्रह्मचर्यका पालन करते हैं, ही है। इस उपनिषद्में कुल बारह मन्त्र हैं। इन मन्त्रोंमें वह पद 'ॐ' है। यह अक्षर 'ॐ' ही ब्रह्म है, यही 'ॐ' की चार मात्राओं (अ, उ, मृ तथा मात्रारहित श्रेष्ठ आलम्बन है और इस आलम्बनको जानकर साधक ॐ) और आत्माके चार पादों (वैश्वानर, तैजस, प्राज्ञ ब्रह्मलोकमें महिमान्वित होता है।' और तुरीय)-में साम्यता सिद्ध करते हुए कहा गया है मुण्डकोपनिषद् (२।२।४)-में ओंकारका महत्त्व कि जो ॐ को इस प्रकार जानता है, वह स्वत: अपनी सुन्दर रूपकद्वारा समझाया गया है कि 'ओंकार मानो आत्मामें ही प्रवेश कर जाता है। इस उपनिषद्पर भगवान् धनुष है, जीवात्मा मानो बाण है और परब्रह्म परमात्मा ही उसके लक्ष्य हैं अर्थात् जीवात्मारूपी बाणको गौड्पादाचार्यद्वारा लिखित कारिकाओंके आगम प्रकरण (मन्त्र २५—२९)-में कहा गया है कि 'चित्तको ओंकारमें उपासनाद्वारा निर्मलकर उसको प्रणवरूप धनुषपर समाहित करें। ओंकार निर्भय ब्रह्मपद है। ओंकारमें नित्य भलीभाँति चढाकर परमात्मारूपी लक्ष्य बेधा जा सकता समाहित रहनेवाले साधकको कहीं भी भय नहीं होता। है। अत: ओंकारकी उपासनासे अविनाशी परमात्मामें ओंकार ही परब्रह्म है और ओंकार ही अपरब्रह्म माना प्रवेश किया जा सकता है। तैत्तरीयोपनिषद्की 'शीक्षा-वल्ली' के अष्टम गया है। ओंकार अपूर्व, अन्तर्बाह्य शून्य, अकार्य तथा अव्यय है। प्रणव ही सबका आदि, मध्य और अन्त है। अनुवाकमें आचार्य शिष्योंको उपदेश देते हैं कि 'ॐ' यह शब्दरूप ब्रह्म है—'ओमिति ब्रह्म।ओमितीद्रसर्वम्। प्रणवको इस प्रकार जाननेसे साधक तद्रुपताको प्राप्त हो ओमित्येतदनुकृतिर्ह स्म वा अप्यो श्रावयेत्याश्रावयन्ति। जाता है। प्रणवको ही सबके हृदयमें स्थित ईश्वर जानें। इस प्रकार सर्वव्यापी ओंकारको जानकर बुद्धिमान् पुरुष ओमिति सामानि गायन्ति। ओ॰शोमिति। शस्त्राणि शःसन्ति। ओमित्यध्वर्युः प्रतिगरं प्रतिगृणाति। ओमिति शोक नहीं करता। जिसने अमात्र, तुरीय, अनन्त मात्रावाले, अद्वैत और मंगलमय ओंकारको जाना है, वह साधक ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यग्निहोत्रमनुजानाति। ओमिति मुनि है और कोई अन्य पुरुष नहीं।' ब्राह्मणः प्रवक्ष्यन्नाह ब्रह्मोपाप्नवानीति। ब्रह्मैवो-प्रश्नोपनिषद् (५।७)-के अनुसार यह जो ओंकार पाप्नोति।' ऐसा इसका मनसे ध्यान करें।' है, वही ब्रह्म है। जो उपासक त्रिमात्राविशिष्ट 'ॐ' श्वेताश्वतरोपनिषद् (१।१४)-में कहा गया है कि (अकार, उकार, मकार)-की उपासना करता है, वह जिस प्रकार दो अरणिकाष्ठोंके मन्थनसे अग्निका प्राकट्य तेजोमय सूर्यलोकको प्राप्त होता है और सम्पूर्ण शरीरोंमें होता है, उसी प्रकार अपनी देहको नीचेकी अरिण और अनुप्रविष्ट परमात्मा-संज्ञक पुरुषको देखता है। ओंकाररूपके प्रणवको ऊपरकी अरणि बनाकर ध्यानरूपी मन्थन करते रहनेसे साधक अरणियोंमें छिपी हुई अग्निकी भाँति हृदयमें द्वारा ही साधक शान्त, अजर, अमर, अभय एवं श्रेष्ठ लोकको प्राप्त होता है a Server https://dsc.gg/dharma | एसदेव परमानो देखरा है by Avinash/Sha

संख्या १२] श्रीभैरव एवं र	उनकी उपासना ३१ अस्तरुक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक	
^{भैरवाष्टमीपर विशेष—} श्रीभैरव एवं उनकी उपासना		
•	चन्द्रजी ठाकुर)	
भारतीय धर्मपरम्परामें श्रीभैरव एक विशिष्ट देवता	१-असितांग, २-विशालाक्ष, ३-मार्तण्ड, ४-	
हैं। इनका एक स्वतन्त्र आगम है, जो भैरवागमके नामसे	मोदकप्रिय, ५-स्वच्छन्द, ६-विघ्नसन्तुष्ट, ७-खेचर,	
प्रसिद्ध है। भैरवको भगवान् श्रीविष्णु तथा शंकरके	८-सचराचर, ९-रुरु, १०-कोडदंष्ट्र, ११-जटाधर, १२-	
समकक्ष माना गया है। विष्णुस्वरूप होकर भी ये साक्षात्	विश्वरूप, १३-विरूपाक्ष, १४-नानारूपधर, १५-पर,	
शिवके दूसरे रूप माने जाते हैं। शिवपुराणमें कहा है कि	१६-वज्रहस्त, १७-महाकाय, १८-चण्ड, १९-प्रलयान्तक,	
'भैरवः पूर्णरूपो हि शङ्करस्य परात्मनः।'	२०-भूमिकम्प, २१-नीलकण्ठ, २२-विष्णु, २३-	
आगमों तथा पुराणोंमें भैरव देवताके अनेक चरित्र	कुलपालक, २४-मुण्डपाल, २५-कामपाल, २६-क्रोध,	
प्राप्त होते हैं। उनके आविर्भावसे सम्बद्ध उपलब्ध अनेक	२७-पिंगलेक्षण, २८-अभ्ररूप, २९-धरापाल, ३०-कुटिल,	
आख्यानोंमेंसे एक मुख्य आख्यान यह है कि दक्ष	३१-मन्त्रनायक, ३२-रुद्र, ३३-पितामह, ३४-उन्मत्त,	
प्रजापतिके यज्ञमें योगाग्निद्वारा सतीके देहोत्सर्गकी घटनाको	३५-वटुनायक, ३६-शंकर, ३७-भूतवेताल, ३८-त्रिनेत्र,	
नारदद्वारा सुनकर भगवान् शंकरको सहसा तीव्र क्षोभ	३९-त्रिपुरान्तक, ४०-वरद, ४१-पर्वतावास, ४२-कपाल,	
उत्पन्न हो गया और उन्होंने बड़े जोरसे अपनी जटा	४३-शशिभूषण, ४४-हस्तिचर्माम्बरधर, ४५-योगीश, ४६-	
पृथ्वीपर पटकी तभी एक भीषण रव करता हुआ	ब्रह्मराक्षस, ४७-सर्वज्ञ, ४८-सर्वदेवेश, ४९-	
आकाशको स्पर्श करनेवाला भीषण दिव्य पुरुष प्रकट हो	सर्वभूतहृदिस्थित, ५०-भीषण, ५१-भयहर, ५२-सर्वज्ञ,	
गया और कहने लगा कि आप मुझे क्या आज्ञा देते हैं?	५३-कालाग्नि, ५४-महारौद्र, ५५-दक्षिण, ५६-मुखर,	
फिर शिवके कथनानुसार उसने दक्ष-यज्ञको भंग कर	५७-अस्थिर, ५८-संहार, ५९-अतिरिक्तांग, ६०-कालाग्नि,	
दिया। वही पुरुष भैरव देवताके नामसे प्रसिद्ध हुआ।	६१-प्रियंकर, ६२-घोरनाद, ६३-विशालाक्ष और ६४-	
इसलिये ये शंकरके स्वरूप एवं उनके पुत्र—इन दोनों	दक्षसंस्थितयोगीश भैरव।	
रूपोंमें प्रसिद्ध हैं।	काली आदि दस महाविद्याओंके पृथक्-पृथक् दस	
पुराणों तथा तान्त्रिक ग्रन्थोंमें भैरव देवताका अनेक	भैरव इस प्रकार है—	
रूपोंमें वर्णन आता है। इनके प्रमुख आठ नाम इस प्रकार	१-महाकाल, २-अक्षोभ्य, ३-ललितेश्वर, ४-	
हैं—	क्रोध भैरव, ५-महादेव भैरव, ६-कालभैरव, ७-नारायण	
१-असितांग भैरव, २-रुरु भैरव, ३-चण्ड भैरव,	भैरव, ८-मतंग सदाशिव भैरव, ९-मृत्युंजय भैरव और	
४-क्रोध भैरव, ५-उन्मत्त भैरव, ६-कपालि भैरव, ७-	१०-वटुक भैरव।	
भीषण भैरव और ८-संहार भैरव। इसके अतिरिक्त	वटुक भैरव देवताके सात्त्विक, राजस एवं	
शारदातिलक तथा बृहज्ज्योतिषार्णव आदिमें श्रीवटुक	तामस तीनों प्रकारके ध्यान तन्त्र-ग्रन्थोंमें वर्णित हैं।	
भैरवकी उपासना-पद्धति प्राप्त होती है। वटुक भैरवका	उनका सात्त्विक ध्यान शारदातिलक (२०।५०)–में इस	
पूजन सामान्य देवताओंकी भाँति ही किया जाता है।	प्रकार है—	
'सप्तविंशतिरहस्यम्' में तीन वटुक भैरवोंके नाम तथा	वन्दे बालं स्फटिकसदृशं कुन्तलोल्लासिवक्त्रं	
मन्त्रका वर्णन भी है, इनके नाम इस प्रकार हैं—१-	दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणीनूपुराद्यैः।	
स्कन्द वटुक, २-चित्र वटुक, ३-विरंचि वटुक।	दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं	
'रुद्रयामलतन्त्र' तन्त्र-शास्त्रका एक प्रसिद्ध ग्रन्थ	हस्ताब्जाभ्यां वटुकमनिशं शूलदण्डौ दधानम्॥	
है, इसमें ६४ भैरवोंका वर्णन है—	अत्यन्त प्रभावपूर्ण शरीरयुक्त, प्रसन्न एवं घुँघराले	

केशसे उल्लसित विस्तृत मुखमण्डलयुक्त और तीन भीमविक्रम, व्यालोपवीती, कवची, शूली, शूर तथा नेत्रोंसे युक्त, दोनों करकमलोंमें क्रमश: त्रिशुल और दण्ड शिवप्रिय-इन दस नामोंका जो प्रात:काल उठकर पाठ धारण किये हुए, अनुपम एवं दिव्य मणियोंसे निर्मित करता है, उसे न तो कोई यातना होती है और न कोई

कल्याण

सांसारिक भय होता है।

आगमग्रन्थोंमें इनके विभिन्न प्रकारके शतनाम,

सहस्रनाम, कवच, स्तवराज आदि अनेक स्तोत्र प्राप्त

होते हैं। देवी-पूजा आदिमें भी भैरवकी पूजा होती है।

नवरात्रोंमें दुर्गापूजन तथा कुमारिका-पूजनके साथ वटुक भैरवकी पूजा होती है तथा प्राय: देवी एवं शिवमन्दिरोंमें

इनका विग्रह अवश्य स्थापित रहता है। काशी-प्रयाग

आदि मुख्य तीर्थोंके ये क्षेत्रपाल एवं नगरपाल माने गये

हैं। वहाँ निर्विघ्न निवासके लिये इनका दर्शन-पूजन

÷ नारदादियोगिवृन्दवन्दितं दिगम्बरं ÷

किंकिणीसे सुशोभित कटिवाले और मधुर ध्वनियुक्त

नूपुरोंसे विभूषित पैरवाले तथा स्फटिकके समान उज्ज्वल

वर्णवाले बालस्वरूप वटुक भैरवकी हम अहर्निश वन्दना

श्रीवट्कके प्रातःस्मरणीय दस नाम

कपाली कुण्डली भीमो भैरवो भीमविक्रमः।

व्यालोपवीती कवची शूली शूरः शिवप्रियः॥

एतानि दश नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत्। भैरवी यातना न स्याद् भयं क्वापि न जायते॥

श्रीभैरव देवताके कपाली, कुण्डली, भीम, भैरव,

करते हैं।

÷

श्रीकालभैरवाष्टकम् देवराजसेव्यमानपावनाङ्घ्रिपङ्कजं व्यालयज्ञसूत्रमिन्दुशेखरं कृपाकरम्। ૹ काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे॥१॥ ÷ ÷ काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे॥२॥ ÷ श्यामकायमादिदेवमक्षरं ÷ निरामयम्। ÷ ÷ ÷ ÷ ÷ भजे॥५॥ ÷ निरञ्जनम्। ÷ भजे॥६॥ ÷

आवश्यक माना गया है।

भाग ९१

₿

भानुकोटिभास्वरं भवाब्धितारकं परं नीलकण्ठमीप्सितार्थदायकं त्रिलोचनम्। ÷ कालकालमम्बुजाक्षमक्षशूलमक्षरं ૹ शूलटङ्कपाशदण्डपाणिमादिकारणं ÷ ÷ भीमविक्रमं प्रभुं विचित्रताण्डवप्रियं काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे॥ ३॥ જ઼ भुक्तिमुक्तिदायकं प्रशस्तचारुविग्रहं भक्तवत्सलं स्थितं समस्तलोकविग्रहम्। ÷ विनिक्वणन्मनोज्ञहेमिकङ्किणीलसत्कटिं काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे॥ ४॥ ÷ धर्मसेतुपालकं त्वधर्ममार्गनाशकं कर्मपाशमोचकं सुशर्मदायकं विभुम्। ÷ स्वर्णवर्णशेषपाशशोभिताङ्गमण्डलं काशिकापुराधिनाथकालभैरवं ÷ रत्नपादुकाप्रभाभिरामपादयुग्मकं नित्यमद्वितीयमिष्टदैवतं ૹ मृत्युदर्पनाशनं करालद्रंष्ट्रमोक्षणं काशिकापुराधिनाथकालभैरवं ÷ अङ्गहासभिन्नपद्मजाण्डकोशसन्ततिं दृष्टिपातनष्टपापजालमुग्रशासनम्। ÷ ÷ अष्टसिद्धिदायकं कपालमालिकन्धरं काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे॥७॥ ÷ ÷ भूतसङ्घनायकं विशालकीर्तिदायकं काशिवासलोकपुण्यपापशोधकं विभुम्। ÷ ÷ ÷ ÷ नीतिमार्गकोविदं पुरातनं जगत्पतिं काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे॥८॥ ૹ ÷ कालभैरवाष्टकं पठन्ति ये मनोहरं ज्ञानमुक्तिसाधनं विचित्रपुण्यवर्धनम्।

शोकमोहदैन्यलोभकोपतापनाशनं ते प्रयान्ति कालभैरवाङ्घ्रिसन्निधिं ध्रुवम् ॥ ९ ॥

मानसमें वर्णित उत्कृष्ट श्रीराम-प्रेमी मानसमें वर्णित उत्कृष्ट श्रीराम-प्रेमी

[गताङ्क ११ पृ०सं० ३४ से आगे]

(श्रीसुभाषचन्द्रजी बग्गा)

(७) जटायुजी में 'दरस प्रेम' फिर गीधराजने कहा—प्रभो! आपके दर्शनोंके

सीताजीका अपहरण करके ले जाते हुए रावणको लिये प्राण रोक रखे थे। हे कृपानिधान! अब वे चलना गीधराज जटायुने अतुलनीय पौरुषका प्रदर्शन करते चाहते हैं।

हुए चुनौती दी। लंकापति रावणने उनके पंख काट

दिये। जटायुका क्षत-विक्षत शरीर धरतीपर गिर पड़ा।

संख्या १२]

पीड़ाके असह्य क्षणोंमें भी उनकी एकमात्र अभिलाषा

थी कि वे सीताजीका समाचार प्रभु रामको सुना

सकें। जटायुजी पश्चात्ताप कर रहे हैं कि मरनेके

समय भी मैं मुनिवेषधारी रामको न देख सका, अब प्रभुको सीताजीकी सुधि सुनाये बिना ही ये पामर प्राण प्रयाण करना चाहते हैं-

मरत न मैं रघुबीर बिलोके तापस बेष बनाए। चाहत चलन प्रान पाँवर बिनु सिय-सुधि प्रभुहि सुनाए॥

इस प्रकार गीधराज पछताते हैं। इसी समय जानकीजीको ढूँढ़ते हुए लखनसहित श्रीराम वहाँ

आये। प्रभुने गीधराजको गोदमें उठा लिया और अपने कर-कमलोंके स्पर्शसे उनकी पीड़ाको विनष्ट कर

दिया। जटायु बोले—प्रभो! रावणने जानकीजीको हर लिया है। मैं उस दुष्टसे उन्हें न छुड़ा सका। वह

(गीतावली ३।१२।३)

मोक्स-अधम शरीरको छोड़कर वे प्रभुके मंगलमय धाममें प्रविष्ट हो रहे थे। ऐसी स्थितिमें जीवित रहकर

हो रहा था।

घाटेका सौदा कैसे स्वीकार करते? मेरे मरिबे सम न चारि फल, होहिं तौ, क्यों न कहीजै?

न लगे तो बताइये।

(गीतावली ३।१५।४) गीधराज कहते हैं-मैं मुखसे आपका नाम ले

रहा हूँ, आपके मुखारविन्दका दर्शन मुझे हो रहा है, आपके मधुर वचन मेरे श्रवणगोचर हो रहे हैं। दूसरा

ऐसा कौन है, जो अपनेको मेरे समान बड़भागी बतला सके?

दरस लागि प्रभु राखेउँ प्राना। चलन चहत अब कृपानिधाना॥

हैं, जिससे वे उनकी कुछ सेवा कर सकें, पर गीधराज

इस प्रस्तावको अस्वीकार कर देते हैं। अपने शरीरको

श्रीरामके नयन-जलसे भीगा जानकर हँसकर बोले—

रघुनाथजी! मुझे तो अपनी मृत्युके सामने चारों फल तुच्छ प्रतीत हो रहे हैं और यदि आपको मेरी बात ठीक

प्राप्त हो रहा था, उससे बड़ा लाभ क्या हो सकता था?

इससे बढ़कर शरीरकी सार्थकता क्या हो सकती थी;

सौन्दर्यसिन्धु प्रभु श्रीरामका रूप निहारनेका अवसर प्राप्त

क्योंकि 'परहित सरिस धर्म नहिं भाई।'

गीधराजको अधम खगयोनिके बदले जो कुछ

धर्म-परहितके लिये उनका शरीर विनष्ट हुआ,

काम—कामके अनित्य सौन्दर्यके स्थानपर उन्हें

प्रभु श्रीराम जटायुसे जीवित रहनेका आग्रह करते

श्रवन बचन, मुख नाम, रूप चख, राम उछंग लियो हौं। तुलसी मो समान बड़भागी को कहि सकै बियो हौं॥

ले गया।

विलाप करती हुई जनकनन्दिनीको दक्षिण दिशाको

(गीतावली ३।१४।३)

भाग ९१ जटायुजी यह भी कहते हैं—हे प्रभु! अत्यन्त अन्तमें सीताजीके प्रेमकी विजय हुई और वे वनमें निकटसे आपका दर्शन प्राप्त कर रहा हैं। इस श्रीरामजीके संग गयीं। देहसे ईश्वरकी प्राप्ति हो गयी, अब और किस प्रेम स्वयं अपनी पराकाष्ठा है। प्रेमके तापमें पदार्थकी प्राप्ति बाकी रही, जिसके लिये शरीर स्वयं परमात्मा भी तपे हैं। प्रभु श्रीराम बडी मर्यादाके बनाये रखुँ? साथ सीताजीको श्रीहनुमान्जीद्वारा यह मर्मस्पर्शी प्रेमपीड़ाका सन्देश भिजवाते हैं। 'मेरे और तुम्हारे सो मम लोचन गोचर आगें। राखौं देह नाथ केहि खाँगें॥ इसका उत्तर भगवान्ने मौन ही दिया, मानो प्रेमका तत्त्व एक मेरा मन ही जानता है और वह मन सदा तुम्हारे पास ही रहता है। बस, मेरे प्रेमका गीधराजके प्रेमपर सही पड़ गयी और गीधराज प्रभु श्रीरामकी रूप-माधुरी देखते हुए अपने प्राणोंका परित्याग सार इतनेमें ही समझ लो।' कर देते हैं। उन्हें भगवानुका सारूप्य प्राप्त हुआ। तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एक मनु मोरा॥ अत: तुलसीदासजीने कहा— सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं॥ और सीताजी यह सन्देश सुनकर प्रेममें मग्न होकर रघुपति चरन उपासक जेते। खग मृग सुर नर असुर समेते॥ बंदउँ पद सरोज सब केरे। जे बिनु काम राम के चेरे॥ देहकी सुध-बुध भूल जाती हैं— (८) श्रीसीताजीमें 'तत्त्वप्रेम' प्रभु संदेसु सुनत बैदेही। मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही॥ श्रीसीताजीने महान् प्रेम और नारी-धर्मकी मर्यादा जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।। प्रदर्शितकर स्त्रियोंके लिये लोक-परलोकका अनुकरणीय ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मित पावउँ॥ गोस्वामी तुलसीदासजी जानकीजीकी उत्तमता दिखाते मार्ग दिखलाया है-हुए कहते हैं कि मैं श्रीजनक महाराजकी पुत्री, जगत्की निज कर गृह परिचरजा करई। रामचंद्र आयसु अनुसरई॥ माता, करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजीको अतिशय प्रिय जो जेहि बिधि कुपासिंधु सुख मानइ। सोइ कर श्री सेवा बिधि जानइ॥ श्रीजानकीजी हैं, उनके दोनों चरणकमलोंको मनाता हूँ; गोस्वामी तुलसीदासजी दोहावलीमें कहते हैं कि जिनकी कृपासे मैं निर्मल बुद्धि पाऊँ; क्योंकि निर्मल भलीभाँति नियमपूर्वक श्रीसीताजीके चरणोंमें प्रणाम करनेसे और उनके सुन्दर नामका स्मरण करनेसे स्त्रियाँ मनसे ही श्रीरामजीको पाया जा सकता है। जनकनन्दिनी सीताजी पृष्पवाटिकामें श्रीरामजीके पतिव्रता हो जाती हैं और अपने प्रिय प्राणनाथका प्रेम साँवरे रूपकी सुधाका पानकर अभिभूत हो नेत्रमार्गसे प्राप्त करती हैं। उन्हें हृदयमें स्थितकर पलकोंको बन्द कर लेती हैं। सीता चरन प्रनाम करि सुमिरि सुनाम सुनेम। लोचन मग रामहि उर आनी। दीन्हे पलक कपाट सयानी॥ होहिं तीय पतिदेवता प्राननाथ प्रिय प्रेम॥ वनगमनके पूर्व श्रीराम श्रीसीताजीको वनके कष्टोंको कानोंसे चाहे कम सुनायी पड़े, आँखोंकी रोशनी भी चाहे घट जाय, सारे शरीरका बल भी चाहे क्षीण समझाते हुए संग ले जानेमें हिचक रहे हैं, परंतु श्रीसीताजी स्पष्ट कह देती हैं कि पतिकी अनुपस्थितिमें हो जाय, किंतु यदि श्रीहरिमें प्रेम नहीं घटे तो इनके सभी सुख रोगके समान, आभूषण भारस्वरूप और संसार घटनेसे हमारा क्या घट जायगा? नरककी पीड़ाके समान है। पुरुषके बिना नारी जलविहीन श्रवण घटहुँ पुनि दुग घटहुँ घटउ सकल बल देह। सरिताके समान है-इते घटे घटिहै कहा जौ न घटे हरिनेह॥ जिय बिनु देह नदी बिनु बारी । तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी॥ तात्पर्य यह है कि और चाहे जो भी घट जाय,

नाथ सकल सुख साथ तुम्हारें। सरद बिमल बिधु बदन निहारें॥ प्रभु श्रीराममें प्रेम नहीं घटना चाहिये। [समाप्त] Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha संख्या १२] श्रीरामकृष्ण परमहंस श्रीरामकृष्ण परमहंस संत-चरित— (स्वामी श्रीअभेदानन्दजी महाराज) श्रीरामकृष्ण परमहंस, एक मतसे आधुनिक भारतके इन सब बातोंका वर्णन स्थानाभावके कारण नहीं हो संतशिरोमणि माने जाते हैं। १७ फरवरी सन् १८३६ सकता। ई० को बंगालप्रान्तान्तर्गत हुगली जिलेके 'कामारपुकुर' बचपनसे ही श्रीरामकृष्ण सम्प्रदायिकता तथा संकृचित नामक एक अप्रसिद्ध गाँवमें पैदा हुए थे। इनका भावोंके विरोधी थे; किंतु साथ ही उन्होंने यह भी बताया घरका नाम गदाधर चट्टोपाध्याय था और इनके माता-कि सभी सम्प्रदाय और मत-मतान्तर सच्चे जिज्ञासुओं के पिता ईश्वरप्रेमी, धार्मिक और उच्च आध्यात्मिक आदर्शींसे समस्त धर्मींके सर्वसम्मत लक्ष्यतक पहुँचानेके लिये भिन्न-भिन्न रास्ते हैं। संसारके भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों सम्पन्न सनातनी ब्राह्मण थे। श्रीरामकृष्णका असाधारण घटनाओंसे परिपूर्ण और मत-मतान्तरोंके अनुसार साधना करके उन्होंने प्रत्येक प्रारम्भिक जीवन जन्मस्थलीमें ही व्यतीत हुआ। चार विशिष्ट धर्मके सर्वोच्च ध्येयको प्राप्त किया और साधनाद्वारा सालकी अवस्थामें ही वह पहले-पहल समाधिस्थ प्राप्त अपनी आध्यात्मिक अनुभृतियोंका पुंज मानवजातिको दिया। उनके प्रत्येक विचार सीधे ईश्वरसे प्राप्त होते थे। हुए और दिनोंदिन उनकी यह प्रवृत्ति बलवती होती गयी। पुस्तकीय विद्यासे अरुचि होनेके कारण ग्रामीण उनमें मानवीय बुद्धि, संस्कार अथवा पाण्डित्यकी करामातोंका प्राइमरी पाठशालासे उनकी शिक्षा समाप्त हो गयी, सिम्मिश्रण नहीं था। जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त उनका परंतु उनके अनुकरणीय चरित्र, कलानिपुणता, मधुर प्रत्येक कार्य असाधारण था। उनके जीवनकी प्रत्येक अवस्था किसी नये शास्त्रका एक-एक अध्याय थी, जिसे सुरीले स्वर, अपूर्व आनन्दमय अनुभव, अलौकिक व्यक्तित्व, असाधारण बुद्धि तथा सभी जातियों और मानो पौर्वात्य और पाश्चात्य सभी लोगोंको लाभ सम्प्रदायोंके लोगोंसे निष्काम प्रेमके कारण वे आसपासके पहुँचानेके लिये तथा बीसवीं शताब्दीकी अध्यात्म-सम्बन्धी आवश्यकताओंको पूर्ण करनेके लिये स्वयं समस्त ग्राम-निवासियोंकी प्रशंसा तथा भक्तिके पात्र भगवान्ने अपने अलक्ष्य हाथोंसे खास तौरपर लिखा था। हो गये। सन् १८५३ ई० में श्रीरामकृष्ण अपने सबसे उनके चरित्र और उपदेश इतने अलौकिक एवं बड़े भाई रामकुमार चटर्जीके साथ कलकत्ते आये चमत्कारपूर्ण थे कि उनके १६ अगस्त १८८६ ई० और सन् १८५६ ई० में जब रानी रासमणिने इनके को संसारसे कूच करनेके दस वर्षके भीतर ही भूतपूर्व बड़े भाईको कलकत्तेके निकटवर्ती दक्षिणेश्वरमन्दिरका प्रोफेसर सी० एच० टॉनीने लन्दनके 'इम्पीरियल और प्रधान पुजारी नियुक्त किया, तब ये उनके सहायक क्वार्टर्ली रिव्यू' के सन् १८९६ ई० के जनवरीके बन गये। रामकुमारकी मृत्युके बाद ये कई महीने अंकमें 'एक आधुनिक हिन्दू संत'(श्रीरामकृष्ण) शीर्षक वहीं बडे भाईके स्थानपर रहे। इसी समय इनकी लेख छपवाया था। दिवंगत प्रोफेसर मैक्समूलरने भी हिन्दूधर्मके विभिन्न अंगोंकी साधना आरम्भ हुई, जो सन् १८९६ ई० के 'नाइन्टीन्थ सेंचुरी' (उन्नीसवीं बारह वर्षतक चलती रही। यहाँपर इन्होंने किस प्रकार शताब्दी) नामकी अंग्रेजी पत्रिकाके अगस्त अंकमें 'A Real Mahatma' (एक वास्तविक महात्मा) तपस्या और त्यागमय जीवन व्यतीत किया, किस प्रकार तोतापुरीसे संन्यास लिया और उन्होंने इनका शीर्षकसे महात्मा रामकृष्णके जीवनका संक्षिप्त परिचय नाम 'रामकृष्ण परमहंस' रखा और किस प्रकार इन्होंने लिखा और बाद में ' Ramkrishan: His Life and तान्त्रिक साधना तथा ख्रीष्ट और इस्लाम धर्मके अनुसार Sayings' (श्रीरामकृष्ण : उनके चरित्र और उपदेश) उन-उन धर्मोंके अनुयायियोंकी भाँति उपासना की-नामक पुस्तक लिखी।

भाग ९१ ************************* सन् १९०३ ई० में न्यूयार्क (अमेरिका)-की श्रीरामकृष्णने आध्यात्मिक जगतुमें गुरुको स्त्रीरूपमें मानकर स्त्रीत्वके आदर्शको और भी ऊँचा बना दिया। वेदान्त सोसायटीने 'Sayings of Ramkrishna' (रामकृष्णके उपदेश) तथा सन् १९०७ ई० में इस लेखककी धार्मिक इतिहासमें स्त्रीत्वको इतना सम्मान देनेवाला भूमिकासहित 'Gospel of Ramkrishna' (रामकृष्णका अन्य कोई मसीहा अथवा नेता नहीं देखा गया। सन्देश) नामक ग्रन्थ प्रकाशित किये। इस 'सन्देश'का श्रीरामकृष्ण स्पर्शमात्रसे ही किसी भी पापीके चरित्रको अपनी दैवीशक्तिद्वारा पलट देते थे और उसे बादमें यूरोपकी स्पैनिश, पुर्तगीज, डैनिश, स्कैण्डिनेवियन और चेकोस्लेवाकी भाषामें अनुवाद हुआ। आध्यात्मिक जगत्में पहुँचा देते थे। वे दूसरोंके पाप श्रीरामकृष्णके अवतारका हेत् अपने ऊपर ले लिया करते थे और अपनी आध्यात्मिक उनके अवतारका हेत् अपने जीवनके द्वारा यह शक्ति उनमें डालकर तथा उन्हें ईश्वरके दर्शन कराकर दिखलाना था कि किस प्रकार कोई सच्चा आत्मज्ञानी उनको पवित्र कर देते थे। ऐसी अलौकिक शक्ति इन्द्रियके विषयोंसे बहिर्मुख होकर परमानन्दमें लीन रह साधारण संतों और महात्माओंमें देखनेको नहीं मिलती। सकता है। वे यह सिद्ध करनेके लिये आये थे कि प्रत्येक श्रीरामकृष्ण परमहंसके उपदेश आत्मा अमर है और ब्रह्मत्वको प्राप्त करनेकी सामर्थ्य १. वाद-विवाद न करो। जिस प्रकार तुम अपने रखता है। विभिन्न सम्प्रदायोंके अन्तस्तलमें सैद्धान्तिक धर्म और विश्वासपर दृढ़ रहते हो, उसी प्रकार दूसरोंको एकता दिखाकर उनमें मेल स्थापित करना ही उनके भी अपने धर्म और विश्वासपर दृढ़ रहनेका पूरा अवसर दो। केवल वाद-विवादसे तुम दूसरोंको उनकी गलती जीवनका उद्देश्य था। पहले-पहल श्रीरामकृष्णने ही यह सिद्ध करके दिखाया कि समस्त धर्म एक नित्य सत्यकी नहीं समझा सकोगे। परमात्माकी कृपा होनेपर प्रत्येक ओर ले जानेवाले विभिन्न मार्ग हैं। परमात्मा एक है, मनुष्य अपनी गलती समझेगा। किंतु उसके अनेक रूप हैं। विभिन्न जातियाँ उनकी पूजा २. यह सच है कि परमात्माका वास व्याघ्रमें भी विभिन्न नामों और रूपोंसे करती हैं। वह साकार भी है है, परंतु उसके पास जाना उचित नहीं। उसी प्रकार यह और निराकार भी और दोनोंसे परे निर्गुण भी है। उसके भी ठीक है कि परमात्मा दुष्टसे भी दुष्ट पुरुषमें विद्यमान नाम और रूप होनेपर भी वह बिना नाम और बिना है, परंतु उसका संग करना उचित नहीं। रूपका है। ३. पानी और उसका बुलबुला एक ही चीज उनका ध्येय था परमात्माको विश्वका माता-है। बुलबुला पानीसे बनता है और पानीमें तैरता है पिता सिद्ध करना तथा इस प्रकार स्त्रीत्वके आदर्शको तथा अन्तमें फूटकर पानीमें ही मिल जाता है; उसी प्रकार जीवात्मा और परमात्मा एक ही चीज है, भेद जगदम्बाके पदपर प्रतिष्ठित करना। अपनी स्त्रीको वे केवल इतना ही है कि एक छोटा होनेसे परिमित है मानवीरूपमें जगदम्बा ही समझते थे और 'षोडशी देवी' कहकर उनकी पूजा करते थे। इस प्रकार इस और दूसरा अनन्त है; एक परतन्त्र है और दूसरा विलासिताके युगमें भी भौतिकेतर आध्यात्मिक विवाहकी स्वतन्त्र है। सत्यता उन्होंने प्रमाणित की। उनकी स्त्री भगवती ४. रेलगाडीका इंजन वेगके साथ चलकर कुमारी शारदादेवीने पवित्रता, सतीत्व और जगन्मातृत्वका ठिकानेपर अकेला ही नहीं पहुँचता, बल्कि अपने आदर्श स्थापित किया और वे भी श्रीरामकृष्णको साथ-साथ बहुत-से डिब्बोंको भी खींच-खींचकर पहुँचा

देते हैं।

देता है। यही हाल अवतारोंका भी है। पापके बोझसे

दबे हुए अनन्त मनुष्योंको वे ईश्वरके पास पहुँचा

मानवीरूपमें जगदीश्वर मानकर ही उनकी भक्ति करती

थीं। संसारके धार्मिक इतिहासमें इस प्रकारके आध्यात्मिक

विवाहका अन्य कोई उदाहरण नहीं मिलता, अपितु

मंगलमयी गोमाताकी सेवा परम कल्याणकारी है मंगलमयी गोमाताकी सेवा परम कल्याणकारी है

(गोलोकवासी जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी' महाराज)

वेदोंमें गोमाताको विश्वरूपा एवं विश्ववन्द्या बतलाया है। यहाँतक कि परम परात्पर परब्रह्म भगवान् श्रीकृष्णने

गया है। अथर्ववेदके गोसूक्तमें आया है— अपना समस्त बाल्यकाल गोसेवामें ही व्यतीत कर दिया था

तथा भगवान् श्रीरामके पूर्वज सम्राट् दिलीप इसी गोरक्षाके माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्य नाभिः।

प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं विधष्ट।। हित अपने प्राणोंतकका उत्सर्ग करनेको तत्पर हो गये।

यहाँ इसे रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, आदित्योंकी ऐसी महिमामयी गोमाता आज अकालग्रस्त क्षेत्रोंमें

बहन और अमृतकी नाभिस्वरूप कहते हुए इसे अहिंसनीया

संख्या १२]

बतलाया गया है।

गोमाता विश्वकी माता हैं 'गावो विश्वस्य मातरः'।

ये हमारे जीवनकी सर्वस्व निधि हैं। भारतीय पुरातन परम्परा,

संस्कृति, सभ्यता, मर्यादा एवं धर्मकी प्रतीक स्वरूप हैं।

भारतीय धर्मके विभिन्न रूप गोमातापर आधारित हैं। अनादि वैदिक सनातनधर्म एवं तदन्तर्गत सभी धर्मींके कार्य गोमाताके

बिना सम्पादित नहीं हो सकते। ये हमारी परम पुज्या, परम वन्दनीया, परमाराध्या हैं। ये परम दिव्य अमृतको प्रदान

करनेवाली हैं, यही हमारे पोषणकी एकमात्र आधारशिला हैं।

इनके दूध, दही, नवनीत, घृत, मल, मूत्रादि सभी हमें

बलिष्ठ, ओजसम्पन्न, कान्तिमान्, पवित्र, स्वस्थ, सद्बुद्धिमान् बनानेवाले हैं। इनके आश्रयसे मानवमात्र इहलौकिक एवं पारलौकिक दिव्यानन्दकी अनवरत कामना करते हैं तथा

देशपर आनेवाले भीषण संकटोंका परिहार भी इन्हींके बलपर करनेमें पूर्ण समर्थ होते हैं। हमारे वेद, स्मृति, पुराणादि सकल शास्त्रोंमें इनकी महिमा, इनके महत्त्वका पद-पदपर

वर्णन है। ये केवल अवध्या ही नहीं अपित परम वन्दनीया, प्रात:स्मरणीया हैं। निखिलजन-हितकारिणी, परम पवित्रा, मंगलदायिनी एवं विविध पातकविनाशिनी हैं।

गो हमारे आचार, पवित्रता और आरोग्यकी आधाररूपा है। गोवंशकी श्रमशक्तिद्वारा पृथ्वीसे अन्नादिकी विपुल उत्पत्ति होती है, गोमयसे यज्ञभूमि, गृहस्थोंका आँगन और वानप्रस्थियोंकी कुटिया पवित्र होती है। गोघृतद्वारा यज्ञादिदेवोंकी

तृप्ति होती है, गोद्ग्ध मनुष्यके लिये तेज, बल, वृद्धि और

स्फूर्तिदायक है। गोमय, गोदुग्ध तथा गोघृतकी उपयोगिता तो है ही, साथ ही सवत्सा गायके दानसे मनुष्य सहज ही वैतरणी नदीको पार करनेका अवसर प्राप्त कर लेता है।

अनेक पुराणोंमें गोमाताको शक्तिरूपमें निरूपित किया गया

अत्यन्त शोचनीय अवस्थामें अपना जीवनयापन कर रही हैं। गोकी महिमासे अज्ञात व्यक्ति अकालग्रस्त क्षेत्रोंमें आज भूखसे व्याकुल गोमाताको त्याग रहे हैं और भैंसोंका

पालन-पोषण कर रहे हैं, यह कैसी विडम्बना एवं खेदास्पद स्थिति है! सम्भवतः भूख और कष्टसे जर्जर गोविन्दकी गायके क्रन्दनको हम सुन नहीं पा रहे हैं।

वैदिक संस्कृतिकी पोषक, जिसका दर्शन पुण्यास्पद है, जो कष्टसिहष्णु है, उसके प्रति ऐसी उपेक्षा चिन्तनीय है। गोदुग्धकी महिमाका बखान तो हम करते हैं, पर वह

गोसंरक्षणके बिना कैसे सम्भव होगा? सम्प्रति आज आवश्यकता है गोसंरक्षणकी। राष्ट्रकी समृद्धिदायिनी गाय विवश हो आज अपने अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे हमारी ओर निहार

भारतवासीका धार्मिक एवं नैतिक कर्तव्य है। यह एक महान् यज्ञ है, जिसमें सभीको सिक्रय सहयोग देना है। जिनकी गोमाताके प्रति श्रद्धा-निष्ठा है, वे इस व्रतको ग्रहण करेंगे तभी यह सफल हो सकेगा।

रही है। ऐसे समयमें गोमाताकी रक्षा करना प्रत्येक

गोमाताका महत्त्व धार्मिक, आर्थिक, राष्ट्रोन्नति आदि जिस दृष्टिसे भी देखा जाय परम कल्याणकारी है। इसकी आराधनासे, इसके सेवा-कैंकर्यसे पुरुषार्थचतुष्टयकी उपलब्धि होती है। जिस देशमें गोरक्षण, गोसेवा होती है, वह कभी भी

संक्रामक रोगसे, अर्थाभाव, अशान्ति एवं असुखसे नानाप्रकारके महातंकसे आक्रान्त नहीं होता। यथार्थत: देखा जाय तो गोमाताके बिना जीवन जीवन नहीं है, केवल असुरता है। अपना कल्याण चाहनेवाले गृहस्थोंको अपनी सम्पूर्ण शक्तियोंसे गोसेवा करना परम इष्ट है। यह सेवासे शीघ्र

ही धन, सम्पत्ति, आरोग्य आदि सुखकर साधन सुलभ करा देती है। परम पवित्र सात्त्विक सर्वोपकारी धेनु सर्वथा ब्रह्माण्डपुराण, पद्मपुराण, स्कन्दपुराण, भविष्यपुराण आदि

अर्चनीय, वन्दनीय और अवध्य है। यह सर्वदेवमयी है, परम हितैषिणी और परमात्माकी मांगलिक शक्ति है।

साधनोपयोगी पत्र वैराग्य हो जायगा। फिर जिस प्रकार हम जान-बूझकर (१) वैराग्य और भजन कैसे हो? अफीम नहीं खाते, अग्निमें हाथ नहीं डालते, साँपको

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका एक पत्र

पहले मिला था। कुछ दिन बाद दूसरा भी मिला। पहले

पत्रका जवाब नहीं दिया जा सका, इसके लिये किसी प्रकारका विचार नहीं करना चाहिये। आप मेरे पत्रकी

प्रतीक्षा करते रहते हैं, यह आपके बड़े प्रेमकी बात है।

इतना प्रेम करनेवाले प्रेमियोंको मैं समयपर उनके पत्रका

उत्तर भी नहीं लिख पाता, इस अपराधसे छूटनेके लिये भी प्रेमियोंके प्रेमका ही भरोसा है। अपनी शक्तिसे तो

कुछ होता नहीं दीखता। प्रेमके सामने कोई शक्ति कुछ काम भी नहीं करती। 'हर समय वैराग्य बना रहे तथा

भगवान्का स्मरण होता रहे'—इस तरहकी आपकी अभिलाषा बहुत ही सराहनीय है। जगत्की अनित्यता, दु:खरूपता और भयानकताका अच्छी तरह ज्ञान होनेके

बाद जगत्के पदार्थींमें आसक्ति नहीं रहती। जबतक इनमें नित्यता, सुख और रमणीयता भासती है तभीतक इनमें राग है। इसके लिये बार-बार संसारके भोगोंमें जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधिरूप दु:ख-दोष देखना चाहिये तथा

सत्संग, विचार और विवेकके द्वारा रमणीयता, सुख और नित्यताका बाध करना चाहिये। वास्तवमें ये सब विषय

जिस रूपमें दीखते हैं, उस रूपमें हैं ही नहीं। हमें अपनी मोहाच्छादित दुष्टिके कारण ही इनका स्वरूप यथार्थ नहीं दीखता, इसीसे इनमें फँसावट हो रही है। जहरसे भरे हुए नकली सोनेके घड़ेके समान, अथवा सुगन्धित इत्र आदि वस्तुओंसे ढकी हुई विष्ठाके समान, अथवा

राखसे ढकी हुई प्रबल अग्निके समान संसारके विषय बार-बार मृत्यु देनेवाले, घृणित, जहरीले तथा जलानेवाले हैं। इस प्रकार समझकर—तथा इसकी परिवर्तनशीलता, क्षणभंगुरता, दृष्टिभेदसे अनुकूल एवं प्रतिकूलरूपता,

सोनेकी खोलीसे मढ़े हुए जहरीले सर्पके समान, अथवा

हाथमें नहीं लेते, विष्ठाको नहीं छूते—इसी प्रकार विषयोंसे अलग हो जायँगे। इनमें प्रीति होना तथा उन्हें ग्रहण करना तो अलग रहा—इनका चिन्तन भी हमें नहीं

> सुहावेगा। विषयोंकी चर्चा भी खारी लगने लगेगी। इस प्रकार भगवान्का स्मरण न होनेमें भी प्रधान कारण भगवान्के यथार्थ तत्त्व, प्रभाव, रहस्य, महिमा और गुणोंके ज्ञानका अभाव ही है। श्रीभगवान्के एक

भी गुणका रहस्य, एक भी नामकी महिमा, एक भी चरित्रका प्रभाव, एक भी शक्तिका तत्त्व जान लिया जाय

अथवा एक भी रूपकी जरा-सी भी झाँकीका ज्ञान भी हो जाय तो फिर भगवान्से क्षणभरके लिये भी चित्त न हटे। फिर विषयोंमें दु:ख-दोष देखकर उनसे चित्त हटानेकी आवश्यकता नहीं रहती, अपने-आप ही विषयोंमें

िभाग ९१

आसक्ति नष्ट हो जाती है। जिस प्रकार सूर्य भगवानुके उदय होनेपर दीपककी ओर कोई आकर्षण नहीं रहता, इसी प्रकार भगवानुकी जरा भी झाँकी होनेके बाद विषयोंका सब रस फीका हो जाता है। असल बात तो यह है कि फिर उसकी तात्त्विक दृष्टिमें विषयोंका

अस्तित्व ही नहीं रहता। एकमात्र सच्चिदानन्दघन भगवान्की ही अखण्ड, अचल, सनातन, अज, अविनाशी, सर्वव्यापिनी सत्ता रह जाती है। उसे फिर आनन्दघन परमात्माके सिवा और कुछ नहीं भासता। इस अवस्थामें उससे परमात्माका असली भजन अपने-आप ही होने

लगता है। वास्तवमें सूर्य और दीपकके उदाहरणकी तुलना परमात्माके ज्ञान और विषयोंके साथ नहीं हो सकती, तथापि समझनेके लिये उदाहरण दिया जाता है।

संसारके विषयोंका स्वरूप तथा परमात्माकी महिमाको यथार्थ रूपसे जाननेके लिये सत्संग तथा भजन ही प्रधान साधन है। वैराग्यवान् सच्चे विरक्त, अनन्य भगवत्प्रेमी और सम्यग्दर्शी ज्ञानियोंके सत्संगसे विषयोंकी तथा भगवान्की स्वरूप-स्थिति सुनने-जाननेमें आती है। फिर

वियोगशीलता, मृत्युमयता आदिपर विचार करके इनसे मन हटाना चाहिये। इनका रूप जब ठीक-ठीक समझमें अHinduism Discord Server https://dse.gg/dharma के MADE WITH LOVE BY Avingshy St

साधनोपयोगी पत्र संख्या १२] बातोंको हृदय ग्रहण करता है। इसलिये जहाँतक बन पडे उत्तरोत्तर श्रेष्ठ है। अपनेको महापुरुषकी शरण कर दे सर्वस्व त्यागकर भी भजन तथा सत्संगके लिये मनुष्यको तथा महापुरुषकी रुचिके अनुसार जीवन बना ले, तब तो उसी क्षण कल्याण हो जाय। पुरा प्रयत्न करना चाहिये। आपकी श्रीगंगाजीके तटपर जानेकी बहुत इच्छा हर समय नामजप कैसे हो? 'हर समय भगवान्के नामका जप हुआ करे' होती है, सो श्रीगंगाजीका तट तो परम पवित्र है एवं वहाँ इसका उपाय पूछा सो स्वाभाविक नाम-स्मरण तो निवास करना भी बड़े सौभाग्यका चिह्न है, परंतु कभी भगवान्का महत्त्व जाननेसे ही होता है। भगवान्के कहीं जाने-आनेका संकल्प न करके श्रीभगवान्के नामपर जितना-जितना विश्वास, प्रेम बढ़ता है, उतना-नामका जप विशेष प्रेम तथा विशुद्ध मुख्य भावसे उतना ही नामजप अधिक हो सकता है। भगवान्के करनेकी चेष्टा करनी चाहिये। भगवान्के नामसे सब नाममें भूल होनेमें अभ्यासकी कमी भी कारण है; परंतु कुछ सहज ही हो सकता है। शेष प्रभुकृपा। प्रधान कारण तो विश्वास और प्रेमकी कमी ही समझना भगवत्पूजाके भावसे धन कमाइये चाहिये। विश्वास तथा प्रेम भी भजन और सत्संगसे ही होते हैं। इसलिये सत्संग तथा नामजप-रूपी भजनका ही सप्रेम हरिस्मरण! जगत्में सब स्वार्थका ही सम्बन्ध है। वस्तुत: कोई किसीका नहीं है। आपने माता-पिताकी विशेष अभ्यास करना चाहिये। भजन करते-करते— भगवान्के नामजपका अभ्यास करते-करते विश्वास सेवाके लिये धन कमानेकी आवश्यकता बतलायी, सो बढ़कर नामजपमें अपने-आप ही प्रगति हो सकती है। ठीक है। धन कमाना बुरी बात थोड़े ही है। अच्छी नामजपमें असली उन्नित तभी समझनी चाहिये, जब नीयतसे और न्यायपूर्वक धन जरूर कमाना चाहिये, परंतु नामजपमें भूल नहीं हो तथा एक-एक नाममें ऐसा महान् यह वास्तवमें हाथकी बात नहीं है। प्रारब्धके अनुसार आनन्द आवे कि जिसकी तुलना सम्राट्-पदकी प्राप्तिसे जैसा होना होगा, होगा। न्याययुक्त चेष्टा कीजिये। भी न हो सके तथा इतना प्रेम उपजे कि नाम-स्मरणके भगवान्की आज्ञा मानकर—भगवान्की पूजाकी बुद्धिसे साथ ही रोमांच, अश्रुपात, गद्गदवाणी आदि होने लगे। धन कमानेका प्रयत्न कीजिये। भगवान्ने रच रखा होगा महापुरुषकी महिमा तो धन मिल जायगा। न रचा होगा तो नहीं मिलेगा। महापुरुषोंकी दया बाबत लिखा सो तो ठीक है; भगवान्के विधानपर संतोष करना चाहिये। परंतु मुझे आप महापुरुष समझते हैं, यह आपकी गलती भगवत्प्रेमकी बात मैं क्या लिखूँ। मैं तो प्रेमसे बहुत है। मैं तो साधारण आदमी हूँ। यों तो एकलव्य भीलने दूर हूँ। हाँ, सुना है-भगवत्प्रेम बहुत ऊँची वस्तु है। पत्थरकी मूर्तिको भी अपनी श्रद्धासे द्रोणाचार्य समझ मोक्षतकको इच्छाका त्याग करनेसे उस प्रेमकी प्राप्ति लिया था। इसी तरह आप किसीमें भी महापुरुषकी भावना होती है। मैं तो एक श्रीभगवन्नामको जानता हूँ। उसका कर सकते हैं; किंतु सचमुच मैं तो महापुरुषोंकी चरण-पूरा महत्त्व तो नहीं जानता—परंतु विश्वास है कि धूलिका भी भिखारीमात्र हूँ। रही महापुरुषोंकी दयाकी भगवन्नामसे सब कुछ हो सकता है और आपको भी बात, सो महापुरुषोंकी तो सभीपर स्वाभाविक दया सर्वदा उसीका आश्रय लेनेकी नम्र सलाह देता हूँ। रहती है, किसीको सच्चे महापुरुष मिल जायँ तो उसका आप माता-पिताकी सेवाके उद्देश्यसे, इसी कर्मके सहज ही कल्याण हो सकता है। उनके महापुरुषत्वपर द्वारा भगवत्पूजनके भावसे भगवन्नामका जप करते हुए और उनकी दयापर विश्वास करनेवाला और उनकी आज्ञा धन कमानेका न्याय और सत्ययुक्त प्रयत्न करें और भगवान् और रुचिके अनुसार आचरण करनेवाला एक-से-एक फलरूपमें जो कुछ भी दें, उसीको सिर चढ़ायें। शेष प्रभुकुपा।

कल्याण

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१८, सूर्य दक्षिणायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, माघ कृष्णपक्ष तिथि वार नक्षत्र दिनांक मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि द्वितीया रात्रिमें ४।६ बजेतक बुध पुनर्वसु दिनमें ११।३२ बजेतक ३जनवरी तृतीया 🦙 २।१ बजेतक 🗤 १०।० बजेतक भद्रा दिनमें ३।३ बजेसे रात्रिमें २।१ बजेतक, मूल दिनमें १०।० बजेसे। गुरु

,,

,,

,,

6 ,,

सिंहराशि दिनमें ८। ३८ बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीवृत, चन्द्रोदय आश्लेषा 🗥 ८। ३८ बजेतक

चतुर्थी 🕠 १२। ९ बजेतक शुक्र पंचमी 🔐 १०।३७ बजेतक| शनि | मघा प्रातः ७। ३१ बजेतक | ६

पू०फा० " ६। ४७ बजेतक षष्ठी 🦙 ९। २९ बजेतक रवि

सप्तमी 🦙 ८। ४७ बजेतक सोम अष्टमी 🗤 ८।३३ बजेतक | मंगल | चित्रा अहोरात्र

हस्त रात्रिशेष ६। २९ बजेतक नवमी 🦙 ८।५० बजेतक ब्ध चित्रा प्रातः ७। ३ बजेतक

दशमी 🚜 ९। ४२ बजेतक | गुरु स्वाती दिनमें ८।९ बजेतक ११

एकादशी,ग११।० बजेतक शुक्र विशाखा 🗤 ९।४२ बजेतक ११२ 🕠 अनुराधा ११ १४ । ४२ बजेतक १३ ज्येष्ठा ११२।३ बजेतक रवि

द्वादशी %१२।४२ बजेतक शिन त्रयोदशी
?? । ४३ बजेतक

१४ " चतुर्दशी रात्रिशेष ५।१४ बजेतक सोम मूल सायं ४।३६ बजेतक

मंगल पु० षा० रात्रिमें ७।१४ बजेतक १६ अमावस्या अहोरात्र अमावस्या प्रात: ७।२ बजेतक

उ० षा० '' ९।४४ बजेतक १७ बुध

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१८, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, माघ शुक्लपक्ष

वार नक्षत्र

तिथि

प्रतिपदा दिनमें ८। ५८ बजेतक गुरु श्रवण रात्रिमें ११।५९ बजेतक |१८जनवरी| धनिष्ठा १११। ५१ बजेतक १९ " शतभिषा 🗤 ३। १६ बजेतक २० ग

द्वितीया '' १०। ३५ बजेतक शुक्र तृतीया 🗤 ११। ४४ बजेतक 🛛 शनि

चतुर्थी <table-cell-rows> १२। २८ बजेतक | रवि पू० भा० ११४। १२ बजेतक

उ० भा० ११ ४। ३५ बजेतक

मंगल रेवती '' ४। ३१ बजेतक

अश्विनी '' ४।० बजेतक

भरणी 😗 ३। १० बजेतक अष्टमी 🗥 १० । १२ बजेतक | गुरु नवमी 😗 ८। ३५ बजेतक कृत्तिका 🗤 १।५७ बजेतक शुक्र

रवि

बुध

दशमी प्रात: ६।४० बजेतक शिन

चतुर्दशी 🕠 ९। ३१ बजेतक मिंगल

द्वादशी रात्रिमें २। १३ बजेतक त्रयोदशी 🗤 ११। ५२ बजेतक 🔣 सोम

पूर्णिमा 🗤 ७। १५ बजेतक

पंचमी ''१२।३८ बजेतक|सोम| षष्ठी 😗 १२।१८ बजेतक सप्तमी 😗 ११। २७ बजेतक बुध

दिनांक

रोहिणी '' १२।३२ बजेतक

मृगशिरा '' १०।५६ बजेतक

आर्द्रा 😗 ९।१६ बजेतक

पुनर्वसु 🗤 ७। ३५ बजेतक

🗤 ६।० बजेतक

२१ "

२२ "

23 "

२४ ग

२६ "

२७ "

२८ "

29 "

30 "

३१ "

१५ ,, अमावस्या।

शिशिर-ऋतु प्रारम्भ।

तिलद्वादशी, मूल दिनमें ११।४२ बजेसे।

चन्द्रदर्शन।

रथसप्तमी।

सोमप्रदोशव्रत।

श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।

वसन्तपंचमी, मुल रात्रिमें ४। ३५ बजेसे।

अभिजितका सूर्य दिनमें १०। ३३ बजे।

वृषराशि दिनमें ८।५० बजे, गणतंत्रदिवस।

षट्तिला एकादशीव्रत (सबका)।

रात्रिमें ९।३ बजे।

मूल प्रातः ७। ३१ बजेतक।

तुलाराशि रात्रिमें ६।४७ बजेसे। ३। १९ बजे, उ०षा०का सूर्य दिनमें १। ४७ बजे।

भद्रा रात्रिमें ९।२९ बजेसे, कन्याराशि दिनमें १२।४९ बजेसे।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

भद्रा दिनमें १२।२८ बजेतक, मीनराशि रात्रिमें ९।५२ बजेसे, वैनायकी

मेषराशि रात्रिमें ४। ३१ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिमें ४। ३१ बजे।

भद्रा दिनमें ११।२७ बजेसे रात्रिमें १०।५० बजेतक, अचलासप्तमी,

भद्रा सायं ५। ३६ बजेसे रात्रिमें ४। ३२ बजेतक, जया एकादशीव्रत (स्मार्त्त)।

भद्रा दिनमें ८। २२ बजेतक, माघी पूर्णिमा, माघ स्नान समाप्त, मूल

सायं ६।० बजेसे, चन्द्रग्रहण—सायं ५।१८ से रात्रिमें ८।४१ बजेतक।

मिथुनराशि दिनमें ११।४३ बजेसे, **एकादशीव्रत** (वैष्णव)।

भद्रा रात्रिमें ९।३१ बजेसे, **कर्कराशि** दिनमें २।० बजेसे।

भद्रा दिनमें ९।८ बजेतक। श्रीरामानन्दाचार्य जयन्ती।

भद्रा दिनमें ९।१६ बजेसे रात्रिमें ९।४२ बजेतक, वृश्चिकराशि रात्रिमें

भद्रा रात्रिमें २।४३ बजेसे, धनुराशि दिनमें २।३ बजेसे, प्रदोषव्रत, मकर-संक्रान्ति रात्रिमें ८।० बजे, खरमास समाप्त, उत्तरायण प्रारम्भ,

खिचड़ी, भद्रा दिनमें ३।५८ बजेतक, मूल सायं ४।३६ बजेतक। मकरराशि रात्रिमें १।५२ बजेसे, मौनी अमावस्या, श्राद्धकी अमावस्या।

कुम्भराशि दिनमें १२।५४ बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें १२।५४ बजे। भद्रा रात्रिमें १२।६ बजेसे, सायन कुम्भका सूर्य दिनमें ३।२३ बजे। व्रतोत्सव-पर्व

व्रतोत्सव-पर्व

,,

,,

,,

दिनांक

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१८, सूर्य उत्तरायण, शिशिर ऋतु, फाल्गुन कृष्णपक्ष तिथि नक्षत्र दिनांक

प्रतिपदा सायं ५।१० बजेतक गुरु आश्लेषा सायं ४। ३६ बजेतक १फरवरी

शुक्र मिघा दिनमें ३। २५ बजेतक

द्वितीया दिनमें ३। १९ बजेतक तृतीया "१।५० बजेतक शनि पू०फा० ११ २। ३७ बजेतक

संख्या १२]

अष्टमी 🛷 १।३ बजेतक

नवमी 🦙 २। २१ बजेतक

चतुर्थी "१२।४२ बजेतक रिव उ०फा० '' २।८ बजेतक

पंचमी 🦙 १२।१ बजेतक | सोम | हस्त

षष्ठी "११।५० बजेतक मंगल चित्रा

😗 २।६ बजेतक 😗 २।३३ बजेतक

ξ सप्तमी 🗤 १२। ९ बजेतक 🛮 बुध

स्वाती '' ३। ३१ बजेतक गुरु

अनुराधा रात्रिमें ६।५४ बजेतक

विशाखा सायं ५।२ बजेतक ८

शुक्र दशमी सायं ४।५ बजेतक| शनि | ज्येष्ठा 😗 ९।१० बजेतक |१०

एकादशी रात्रिमें ६ ।५ बजेतक रिव मूल ''११।४३ बजेतक ११

द्वादशी 🔐 ८। १५ बजेतक सोम 🛮 पू०षा० गरे। २० बजेतक त्रयोदशी , १०। २२ बजेतक मंगल उ०षा० रात्रिमें ४।५२ बजेतक १३

चतुर्दशी 😗 १२ । १७ बजेतक बुध 📗 श्रवण अहोरात्र १४ "

अमावस्या " १।५२ बजेतक । गुरु श्रवण प्रातः ७।११ बजेतक १५ सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१८, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन शुक्लपक्ष

तिथि वार नक्षत्र

धनिष्ठा दिनमें ९।८ बजेतक १६फरवरी प्रतिपदा रात्रिमें २।५८ बजेतक शुक्र द्वितीया 🗤 ३। ३७ बजेतक शनि

शतभिषा ग १०। ४१ बजेतक १७ ग तृतीया 🕶 ३। ४३ बजेतक रवि पू० भा० ११ ११ । ४३ बजेतक उ० भा० '' १२।१३ बजेतक चतुर्थी 🕶 ३। १८ बजेतक सोम १९ "

पंचमी '' २।२५ बजेतक मंगल रेवती '' १२।१५ बजेतक

बुध

शुक्र

सप्तमी 🗤 ११। २७ बजेतक 🕂 गुरु अष्टमी 🗥 ९ । २९ बजेतक नवमी 😗 ७। २३ बजेतक शनि

पुष्य

दशमी सायं ४।५९ बजेतक रिव

एकादशी दिनमें २। ३५ बजेतक

चतुर्दशी प्रात: ७।५३ बजेतक

द्वादशी 😗 १२।१३ बजेतक 🗗 मंगल

त्रयोदशी 🗤 ९। ५८ बजेतक बुध

षष्ठी 😗 १।७ बजेतक

मृगशिरा प्रात: ६।५९ बजेतक पुनर्वसु रात्रिमें ३।४० बजेतक सोम

😗 २।३ बजेतक

आश्लेषा 🕶 १२ । ३७ बजेतक

मघा 😗 ११। २३ बजेतक

भरणी 🕠 ११। ४ बजेतक कृत्तिका ११९।५६ बजेतक रोहिणी ११८।३३ बजेतक

अश्विनी '' ११।५१ बजेतक

२० ग २१ "

२२ "

२४ "

२५ "

२६ "

२७ "

२८ "

१ मार्च

मेषराशि दिनमें १२।१५ बजेसे, पंचक समाप्त दिनमें १२।१५ बजे। २३ "

मूल दिनमें ११।५१ बजेतक।

१२।१३ बजेसे।

भद्रा रात्रिमें ११।२७ बजेसे, **वृषराशि** सायं ४।४६ बजेसे। भद्रा दिनमें १०। २७ बजेतक, होलाष्ट्रारम्भ।

मिथुनराशि रात्रिमें ७।४७ बजेसे।

भद्रा रात्रिमें ३।४७ बजेसे। भद्रा दिनमें २।३५ बजेतक, कर्कराशि रात्रिमें १०।५ बजेसे, आमलकी एकादशीव्रत (सबका) भौमप्रदोषव्रत, मूल रात्रिमें २।३ बजेसे।

सिंहराशि रात्रिमें १२।३६ बजेसे।

भद्रा प्रात: ७।५३ बजेसे रात्रिमें ६।५८ बजेतक, **मृल** रात्रिमें ११।२३ बजेतक, पूर्णिमा, होलिकादाह भद्रा (रात्रिमें ६।५८)-के बाद।

सिंहराशि सायं ४। ३६ बजेसे। **भद्रा** रात्रिमें २।३४ बजेसे, **मूल** दिनमें ३।२५ बजेतक। ,, भद्रा दिनमें १।५० बजेतक, कन्याराशि रात्रिमें ८।३० बजेसे, संकष्टी **श्रीगणेशचतुर्थी, चन्द्रोदय** रात्रिमें ८।४६ बजे। **शुक्रोदय** रात्रिशेष ५ । ४४ बजे ।

अष्टकाश्राद्ध (अपराह्नमें)।

भद्रा दिनमें ११। २० बजेतक।

मीनराशि रात्रिशेष ५। २८ बजेसे।

सायन मीनका सूर्य रात्रिमें ३।६ बजे।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

भद्रा दिनमें ३। ३० बजेसे रात्रिमें ३। १८ बजेतक, **वैनायकी**

श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, शतभिषाका सूर्य रात्रिमें ८।४६ बजे, मूल दिनमें

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

भद्रा दिनमें ११।५० बजेसे रात्रिमें १२।० बजेतक, तुलाराशि रात्रिमें २। १९ बजेसे, धनिष्ठाका सूर्य सायं ५।८ बजे।

वृश्चिकराशि दिनमें १०।३९ बजेसे, श्रीजानकी-जयन्ती।

भद्रा रात्रिमें ३।१४ बजेसे, मूल रात्रिमें ६।५४ बजेसे। भद्रा सायं ४।५ बजेतक, धनुराशि रात्रिमें ९।१० बजेसे। विजया एकादशीव्रत (सबका), मूल रात्रिमें ११। ४३ बजेतक। भद्रा रात्रिमें १०।२२ बजेसे, मकरराशि दिनमें ८।५७ बजेसे, भौमप्रदोषव्रत

कुम्भसंक्रान्ति प्रातः ६ । ४४ बजे, महाशिवरात्रिव्रत।

कुम्भराशि दिनमें ८।१० बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें ८।१० बजे, अमावस्या।

कृपानुभूति भगवत्कृपाकी प्रत्यक्ष अनुभूति मोबाइल बन्द हो चुके थे, जहाँ यह हादसा हुआ वह घटना २९ जुलाई २०१४ ई०को है—वह भयावह हादसा आज भी हमारी आँखोंके सामने चलचित्र-सा स्थान भयंकर विषधर सर्पोंकी निवास-स्थली थी तथा चलायमान रहता है, जो हमारे घनिष्ठ परिचित बरसातके कारण जोंकें भी बहुत फैली हुई थीं। श्रीराजकुमारजीके सुपुत्र शैलेष तथा उनके परिवारके रोंगटे खडे कर देनेवाला दुश्य था! आखिर साहस करके सात-आठ लोग नीचे उतरे। शैलेष, उनकी पत्नी साथ हुआ। घटना इस प्रकार है-ऊटीसे कुछ जोड़े तीन कारोंमें सवार होकर शाम तथा दोनों पुत्रियोंको ऊपर लेकर आये, तबतक रातके सात बजे अपने निवास-स्थानसे कालीकट (केरल)-की २:३० बज चुके थे। ओर निकले। रात दस बजेके करीब पीछेवाली गाडीने जो लोग उनको ऊपर लानेमें सहायता कर रहे थे। आगेवाली गाड़ीको सूचित किया कि दो मोड़ निकल उन्होंने बतलाया कि हमें जरा भी किसीमें वजनकी जानेके बाद भी बीचवाली गाड़ी दिखायी नहीं दे रही है। अनुभृति नहीं हुई (हालाँकि शैलेष शरीरसे कुछ भारी अत: सबलोग वहींपर रुककर किसी अनहोनीकी आशंकासे ही थे)। ऐसा लग रहा था कि कोई अदृश्य शक्ति उन्हें

कोई ५० से ६० किलोमीटर दूर ही रह गया था। स्थानीय पुलिसको भी सूचित किया गया, सभी थककर हार गये, परंतु कारका कहीं पता नहीं चल पाया। कुछ राह-चलते राहगीरोंने मदद की तथा उनकी सूझ-बूझसे एक जगह कारके पहियोंके निशान दिखायी दिये और कारका पता चला। कार रक्षक-पट्टीके बीचमेंसे तीन पलटी खाकर २०० फिट नीचे खाईमें पेड़ोंमें उलझी हुई थी। इस समय १२:३० बज चुके थे। वहाँ बहते

उनका पता चल पाया कि वे लोग वहाँ हैं। उनके

अत्यन्त चिन्तित स्थितिमें उनकी खोज करने लगे। कालीकट

झरनेके कारण आवाजका आदान-प्रदान नहीं हो पा रहा था अर्थात् न कारमें फँसे लोगोंको हमारी आवाज सुनायी दे रही थी और न हमारी आवाज उन लोगोंतक पहुँच रही थी। आखिर उन्होंने गाड़ीके बोनटपर लकड़ीसे पीटना आरम्भ किया। उस ध्वनिसे आकर्षित होकर ही जिन लोगोंने उन्हें बचानेमें मदद की, उन्हें विभिन्न संस्थाओं और तथा समाजकी ओरसे सम्मानित किया गया एवं कालीकटकी पुलिसने भी उन्हें बहादुरीका अवार्ड दिया। भगवत्कृपासे उनका परिवार आज सुरक्षित है, परंतु इस घटनासे मुझे पूरा विश्वास हो गया कि परमात्माका स्मरण

हमें बडी-बडी विपत्तियोंसे बचा लेता है। — स्नेहलता मालपानी

÷

थी। फिर उन्हें सीधे हॉस्पिटल ही ले गये।

ऊपर लानेमें हमारी मदद कर रही है।

यहाँ आपको बता दें कि यह हादसा सावनमें हुआ

था और पिछले ११ सावनसे शैलेषके पिता श्रीराजकुमारजीके

यहाँ अखण्ड रामायणका पाठ होता है। उन सबको ईश-

कृपाकी प्रत्यक्ष अनुभूति हो रही थी। शैलेषकी छातीकी

तीन पसलियाँ चटक गयी थीं तथा उनकी पत्नीके बायीं

तरफ गाल, नाक, कूल्हे एवं पाँवमें पाँच जगह फ्रैक्चर

थे। दोनों बच्चियाँ सुरक्षित थीं, उन्हें खरोंचतक नहीं आयी

चरन-कमल बंदौं हरि-राइ

चरन-कमल बंदौं हरि-राइ।

जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे कौं सब कछ दरसाइ॥
बहिरौ सुनै, गूँग पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र थराइ।

्री सूरदास स्वामी करुनामय, बार बंदौं तिहिं पाइ॥ । । Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE ₩गाम LOVE BY Avinash/Sha

पढो, समझो और करो संख्या १२] पढ़ो, समझो और करो मैं भी २-४ आनेका सामान लाकर पैसे नहीं लेता था। (१) मेरी पहली कमाई एक दिन जब वह खूब रो रही थी, तब मैं उसे सरकारी अस्पताल ले गया। आँखोंके डॉक्टरने जाँचकर कहा कि बड़े-बुजुर्गों और असहायजनोंद्वारा अन्तरात्मासे दिया गया आशीर्वाद किस तरहसे व्यक्तिके मनोरथको मोतियाबिन्द तो नहीं है, नजर कमजोर है, चश्मा लगेगा। सफल करता है, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण मेरी पहली अब हम लोग चश्मेकी दुकानपर गये और डॉक्टरके पर्चेके अनुसार सस्ता-सा चश्मा कितनेमें बनेगा? यह कमाईसे सम्बन्धित है। जानना चाहा। चश्मेवालेने कहा कि सबसे सस्ता चश्मा केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालयद्वारा संचालित तीनवर्षीय 'डिप्लोमा इन रूरल सर्विसेज' (ग्रेज्यूएशनके समकक्ष) २५ रुपयेमें बनेगा। प्राप्त करनेके पश्चात् भी मुझे नौकरी नहीं मिल रही थी। महिला बोली—'मेरे पास खानेको नहीं है तो चश्मा कैसे बनवाऊँगी?' दूसरे दिन मैंने उस महिलाके १९६२ के भारत-चीन-युद्धके पश्चात् वैसे भी नौकरीपर पाबन्दी थी। पिताजी सेवानिवृत्त हो चुके थे। अत: बड़े भाई लड़के माधवको पोस्टकार्ड लिखा, सारी स्थिति बतायी साहबकी सलाहके अनुसार मुझे स्टेनोग्राफी सीखने अजमेर और कमसे कम २५ रुपये भेजनेको कहा। एक सप्ताह भेजा गया। उस समय बताया गया कि ३-४ माहमें बीत जानेपर न तो लडका आया और न उसने पैसे ही प्रशिक्षण पूरा करनेतक मुझे ६० रुपये प्रतिमाह मिलेगा। भेजे। अब महिला हमेशा रोती रहती थी। अजमेरके सिन्धी मोहल्लेमें एक कोठरीका प्रबन्ध इसी बीच मेरे ट्यूशनका महीना पूरा होते ही मुझे किया गया, ३० रुपये माहमें भोजनालयमें व्यवस्था की पैसा मिल गया, जीवनकी पहली कमाईकी खुशी सँभाले गयी और एक इन्स्टीट्यूटमें स्टेनोग्राफी सीखनेहेत् नहीं सँभल रही थी। मैंने सोचा खींचतान चलती रहेगी, पहली कमाईसे मॉॅंके लिये साड़ी खरीदी जाय, परंतु एडमीशन हो गया। एक माहमें ही ज्ञात हो गया कि माहभरके खर्चेके लिये ६० रुपयेकी राशि बहुत कम है। रातको पड़ोसिन महिलाका विलाप सुनकर मनमें आया कि पहली कमाईसे उसका चश्मा बनवा दूँ। साड़ी और भाई साहबके एक मित्रको समस्या बतायी तो उन्होंने अपने एक अधिकारीकी पुत्री, जो सातवीं कक्षामें पढ़ती चश्माको लेकर मनमें द्वन्द्व आ गया। अन्ततः निश्चय थी, को ट्यूशन पढ़ानेहेतु मुझे भेज दिया। मैं चार किलो किया कि चश्मा बनवाया जाय, साड़ी तो अगले मासमें मीटर दूर उस बच्चीको पढ़ाने जाने लगा, पारिश्रमिक भी आ सकती है। तय हुआ २० रुपये महीना। अगले दिन मैं पर्चा लेकर चश्मेकी दूकानपर गया इसी बीच मेरी बगलवाली कोठरीमें एक सिन्धी और कहा कि चश्मा २० रुपयेमें बना दीजिये, दुकानदारने बुजुर्ग महिला रहती थी, जो छोटी-मोटी सिलाई करके, साफ मना कर दिया। दूसरे दिन मैंने पुन: जाकर सैम्पलहेतु छोटी थैली सिलकर अपना गुजारा करती थी। चश्मेवालेसे कहा कि मैं शेष ५ रुपये घरसे पैसा आनेपर उसका लड़का माधव जोवनेरमें छोटी-सी नौकरी करता या ट्यूशनका पैसा मिलनेपर दे दुँगा। मेरे इस तरह था तथा कभी-कभी ही माँको पैसा भेजता था। अब वह आग्रह करने और मनुहार करनेपर चश्मेवाला बोला, प्राय: काम नहीं कर पा रही थी; क्योंकि उसे कम 'वह महिला आपकी कौन है?' तब मैंने पूरी बात दिखायी देता था। पड़ोसी लोग उसे भोजन दे देते थे, बतायी और कहा कि मैं मानवताके नाते उसकी मदद

भाग ९१ ****************************** करना चाह रहा हूँ, ताकि वह अपनी रोटी-रोजी चला बस गये थे, सो हम राजस्थानीके बजाय कन्नड सके। चश्मेवाला मेरी बातसे बहुत प्रभावित हुआ और अधिक हैं। पिताजी सार्वजनिक क्षेत्रके उपक्रम भारत उसने बीस रुपयेमें ही चश्मा बना दिया। इलेक्ट्रांनिक्स लिमिटेडमें एक अधिकारी थे, घरका चश्मा लेकर जब मैं माधे माँ (माधवकी माँ)-माहौल पढ़ने-लिखनेवाला था। पाँच भाइयोंमें मैं सबसे के पास पहुँचा तो उसे सहजमें विश्वास नहीं हो छोटा था, सो मुझपर कोई खास जिम्मेदारी नहीं थी। रहा था कि एक बेरोजगार लडका उसके लिये सिर्फ पढाई करनी थी और करियर बनाना था। चश्मा बनवायेगा। उसने चश्मा लगाया, आसपासकी स्कूली पढ़ाईके बाद बंगलूरूके एक कॉलेजसे मैंने चीजें देखीं, सिलाई मशीनमें धागा पिरोया और दोनों मेकेनिकल इंजीनियरिंगकी पढ़ाई की और फिर हाथोंसे मेरा मुँह सहलाया, हाथ ऊँचे करके प्रार्थनाके एम०बी०ए० भी कर लिया। इसके बाद २००१ ई० स्वरमें कुछ बुदबुदायी। उसकी प्रसन्नताका पारावार में मुझे डेल कम्पनीमें नौकरी भी मिल गयी। ठीक-नहीं था, उसने सारे मोहल्लेमें घूम-घूमकर अपना ठाक पैसे मिल रहे थे। किसी चीजकी कमी नहीं चश्मा दिखाया और मेरे बारेमें बताया। थी, मगर मनमें कुछ उथल-पुथल थी। करीब सात इस घटनाके १४ दिन पश्चात् मेरा नियुक्ति-पत्र आया। साल डेलमें नौकरी करनेके बाद मैंने २००७ ई० में में यह जानकर अचम्भित था कि ४ मई १९६४ ई० को मैंने अमेरिकी दिग्गज कम्पनी अमेरिकन ऑन लाइन वृद्धाको चश्मा दिया था और उसी दिन मेरे नियुक्ति-पत्रपर (ए०ओ०एल०) ज्वाइन कर ली, मुझे और ज्यादा डायरेक्टरने हस्ताक्षर किये थे। कहाँ मैं नौकरी पानेके लिये पैसे मिलने लगे। मगर यह नौकरी भी मुझे रास नहीं स्टेनोग्राफी सीख रहा था, कहाँ यह नौकरी मुझे मेरे आ रही थी। इस बीच २००८ ई० की मन्दीके दौरने डिप्लोमा कोर्सके आधारपर मिल गयी, जो उससे अधिक आईटी जगत्में अफरा-तफरी मचा दी। एक दिन गौरवपूर्ण थी। आज पचास वर्षसे भी अधिक समय बीत एक कम्पनीमें काम करनेवाली मेरे एक मित्रका फोन आया कि उसकी कम्पनी एक झटकेमें करीब छह जानेपर मैं यह निश्चय नहीं कर पा रहा हूँ कि यह घटना संयोगमात्र थी या उस वृद्धाका आशीर्वाद! निश्चय ही यह हजार कर्मचारियोंको बाहरका रास्ता दिखा रही है। उस वृद्ध महिलाकी अन्तरात्मासे निकला आशीर्वाद ही था। हालाँकि इस सूचीमें उसका नाम नहीं था। इसके बावजूद आईटी उद्योगकी इस अफरा-तफरीने उसे घर पहुँचनेपर जब यह घटना मैंने अपनी माँको बतायी तो उन्होंने मुझे गले लगा लिया और कहा, बेचैन कर दिया। नौकरीकी अनिश्चितता, ऊपरसे शहरी 'बेटा! तुम्हारी कमाईकी साड़ी तो मैं जीवनभर पहनूँगी, जीवनकी भाग-दौडने मेरे जैसे अनेक लोगोंको परेशान पर उस वृद्धाको चश्मा देकर तुमने उसकी रोटी-रोजीका कर दिया। हालाँकि मेरी नौकरी बहुत सुरक्षित थी, पर हमारे आस-पास जो घट रहा था, वह कुछ द्वार खोला तो उस करुणामय प्रभुने नौकरी देकर तुम्हारा द्वार भी खोल दिया, उसकी महिमा अपरम्पार है।' और सोचनेको मजबूर कर रहा था। वैसे भी मुझे प्रकृतिके नजदीक रहना अधिक पसन्द था। मैं अक्सर —सुरेशचन्द्र पाराशर (२) सप्ताहान्तमें शहरसे दूर एकान्त क्षेत्रमें चला जाता आईटी कम्पनी छोड़ तीन गायसे था और वहाँ वक्त बिताता था। आखिरकार २००९ शुरू कर दी डेयरी ई० में एक दिन मैंने ए०ओ०एल० को हमेशाके मेरे पूर्वज काफी पहले राजस्थानसे बंगलूरू आकर लिये अलविदा कह दिया। तब मेरी उम्र ३३ वर्षके

पढो, समझो और करो संख्या १२] करीब थी। नौकरी छोड़नेका फैसला करते समय मेरे (3) दिमागमें खेती और डेयरीका ख्याल आया। हालाँकि जयप्रकाश बाबूकी परदु:खकातरता मुझे इसका कोई अनुभव नहीं था। मैंने तीन गायें लोकनायक जयप्रकाशजी मेरे पिताजीके बड़े खरीदीं और फिर बंगलूरूसे चालीस किलोमीटर दूर आत्मीय थे। जिन दिनों पिताजी जसलोक अस्पतालमें दोद्दबलपुर गाँवमें स्थित तीन एकड़ खेतीकी पैतृक किडनीकी चिकित्सा (डाइलेसिस)-हेतु एडिमट थे, जमीनपर अपनी डेयरी शुरू कर दी। शुरुआती महीनोंमें उन्हीं दिनों बाबू जयप्रकाश नारायणकी किडनी भी इससे होनेवाली आय डेल या ए०ओ०एल०-में मुझे अचानक चण्डीगढ़में खराब हो गयी। उन्हें भी जसलोक अस्पतालमें डॉ॰ मणीकी चिकित्सामें दाखिल किया मिलनेवाले वेतनकी तुलनामें कुछ भी नहीं थी। मगर मेरे लिये सन्तोषकी बात थी कि मैं अपना काम कर गया। वैसे उन दिनों किडनीकी चिकित्सा तो केवल रहा था, बेवजहके तनाव और भागदौड़से मुक्त हो डाइलेसिस ही थी। गया था। इसी बीच २०१२ ई० और २०१३ ई०— एक दिन पिताजीने व्हील चेयरकी माँग की लगातार दो वर्षोंमें पड़े सूखेसे मुझे काफी धक्का और कहा—मैं जयप्रकाश बाबूसे मिलने जाऊँगा। लगा। तबतक मेरे साथ कुछ और लोग जुड़ गये मुझसे बोले कि तुम्हारे पास रुपया हो तो मुझे दो। थे। मगर हम मुश्किलसे मवेशियोंका खर्च उठा पा जयप्रकाश बाबूका कमरा भी उसी फ्लोरपर था, जहाँ रहे थे। हमारे पास लिक्विड मनी नहीं थी। हमने पिताजीका कमरा था। पिताजीको वहाँ पहुँचाकर में अपना बिजनेस मॉडल बदलनेके बारेमें विचार किया। वापस आ गया। दोनों साथी करीब एक घण्टा साथ हमने जब इधर-उधर कुछ खँगालना शुरू किया, तो रहे और पुराने दिनोंकी यादें ताजा करते रहे। इस पता चला कि डेयरी फार्मिंगका मतलब सिर्फ दुध बीच जयप्रकाश बाबुका डाइलेसिसपर जानेका समय बेचना नहीं है। इसमें चारा बेचनेसे लेकर दूधकी हो गया। पिताजीने उन्हें रुपयेका लिफाफा थमाया। ट्रांसपोर्टिंग और मवेशियोंकी दवाई बेचनेसे लेकर गायकी जयप्रकाश बाबू बोल पड़े—रामेश्वरजी! मुझे आज ब्रीडिंग (पालन-पोषण) भी शामिल है। इसके बाद पैसेकी बड़ी आवश्यकता थी। जनताके विलक्षण नेता हमने गाय की ब्रीडिंगका काम शुरू कर दिया। जयप्रकाशकी यह स्थिति थी। जिसके इशारेपर सत्ता इसके लिये हम तीन माहसे छ: माहकी बछिया पलट गयी। उसके ये वाक्य! तत्पश्चात् अपने सचिव अब्राहमसे बोले कि 'अब्राहम! बाहर जो बाई बैठी खरीदते हैं, फिर उसे डेढ़ वर्षतक पालते हैं और जब वह दुध देनेलायक गाय बन जाती है तो उसे है, उसे ये रुपये दे आओ। उसके पतिकी डाइलेसिस बेच देते हैं। एक बारमें हमारे पास करीब १२० पैसों बिना रुकी हुई है।' बछिया होती हैं। मैंने अर्बन डेयरी फार्मर नामसे एक जयप्रकाश बाबूकी पिताजीसे यह अन्तिम मुलाकात मार्गदर्शिका भी तैयार की है, जिसके जरिये कोई भी थी। उस समय डायलेसिस अत्यन्त कष्टदायी चिकित्सा-नौकरी करते हुए भी डेयरी शुरू कर सकता है। प्रणाली थी, उस भयंकर पीड़ाके बीच भी उन्हें दूसरेकी अबतक मैं पंचानबे कार्यशालाएँ आयोजितकर ६०० पीड़ा ही अधिक पीड़ित करती थी। लोककी पीड़ाके पेशेवरोंको प्रशिक्षित कर चुका हूँ। प्रति इसी संवेदनशीलता और परदु:खकातरताने उन्हें **—संतोष सिंह** [स्रोत:अमर उजाला, ११ अप्रैल २०१७]

मनन करने योग्य इन्द्रिय-संयम मथुराकी सर्वश्रेष्ठ नर्तकी, सौन्दर्यकी मूर्ति मथुरा नगरके द्वारसे बाहर यमुनाजीके मार्गमें एक

लिये एक मुण्डितमस्तक युवा भिक्षु नगरमें आ रहा था। नगरके प्रतिष्ठित धनी-मानी लोग एवं राजपुरुष-तक

जिसकी चाटुकारी किया करते थे, जिसके राजभवन-जैसे प्रासादकी देहलीपर चक्कर काटते रहते थे, जिसके साथ केवल क्षणभर बात करनेके लिये नौजवान अपना

वासवदत्ताकी दृष्टि अपने वातायनसे राजपथपर पड़ी

और जैसे वहीं रुक गयी। पीत-चीवर ओढ़े, भिक्षापात्र

सर्वस्व लुटानेको प्रस्तुत हो जाया करते थे; वह नर्तकी भिक्षुको देखते ही उन्मत्तप्राय हो गयी। इतना सौन्दर्य! ऐसा अद्भुत तेज! इतना सौम्य

फिर जितनी शीघ्रता उससे हो सकी, उतनी शीघ्रतासे दौड़ती हुई सीढ़ियाँ उतरकर अपने द्वारपर आयी। 'भन्ते!' नर्तकीने भिक्षको पुकारा। 'भद्रे!'भिक्षु आकर मस्तक झुकाये उसके सम्मुख

खड़ा हो गया और उसने अपना भिक्षापात्र आगे बढ़ा दिया।

'आप ऊपर पधारें!' नर्तकीका मुख लज्जासे लाल

मुख! -- नर्तकी दो क्षण तो ठिठकी देखती रह गयी और

हो उठा था; किंतू वह अपनी बात कह गयी--'यह मेरा भवन, मेरी सब सम्पत्ति और स्वयं मैं अब आपकी हूँ। मुझे आप स्वीकार करें।'

'मुझे धर्म-भिक्षा चाहिये। काम-भिक्षाका समय अब नहीं रहा! भगवान् तथागत तुम्हारा कल्याण करें; मैं फिर तुम्हारे पास आऊँगा।' भिक्षुने मस्तक ऊपर उठाकर बडी बेधक दुष्टिसे नर्तकीकी ओर देखा और

पता नहीं क्या सोच लिया उसने।

'कब?' नर्तकीने हर्षोत्फुल्ल होकर पूछा। 'समय आनेपर!' भिक्षु यह कहते हुए आगे बढ़

गया था। वह जबतक दीख पड़ा, नर्तकी द्वारपर खड़ी उसीकी ओर देखती रही।

उधरसे निकलते समय लोग अपना मुख दूसरी ओर कर लेते थे और नाक दबा लेते थे। यह नारी थी नर्तकी वासवदत्ता! उसके दुराचारने उसे इस भयंकर रोगसे ग्रस्त

निराश्रित मार्गपर पडी थी। सहसा एक भिक्षु उधरसे निकला और वह उस दुर्दशाग्रस्त नारीके समीप खड़ा हो गया। उसने पुकारा—

'वासवदत्ता! मैं आ गया हूँ।'

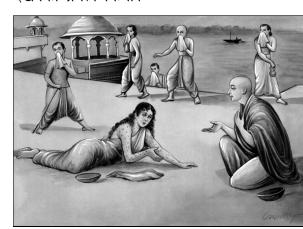
'कौन?' उस नारीने बड़े कष्टसे भिक्षुकी ओर देखनेका प्रयत्न किया।

स्त्री भूमिपर पड़ी थी। उसके वस्त्र अत्यन्त मैले और

फटे हुए थे। उस स्त्रीके सारे शरीरमें घाव हो रहे थे।

पीव और रक्तसे भरे उन घावोंसे दुर्गन्ध आ रही थी।

कर दिया था। सम्पत्ति नष्ट हो गयी थी। अब वह



'भिक्षु उपगुप्त!' भिक्षु बैठ गया वहीं मार्गमें और उसने उस नारीके घाव धोने प्रारम्भ कर दिये।

'तुम अब आये ? अब मेरे पास क्या धरा है। मेरा

यौवन, सौन्दर्य, धन आदि सभी कुछ तो नष्ट हो गया।'

नर्तकीके नेत्रोंसे अश्रुधार चल पड़ी। 'मेरे आनेका समय तो अभी हुआ है।' भिक्षुने उसे

धर्मका शान्तिदायी उपदेश देना प्रारम्भ किया। Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma ये भिश्चेकेट स्थापेन्पिय्ठणस्ट अश्वेकात्रेत्रकार्

(भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और सदाचार-सम्बन्धी सचित्र मासिक पत्र)

'कल्याण'

-के ९१वें वर्ष (वि०सं० २०७३-७४, सन् २०१७ ई०)-के दूसरे अङ्कसे बारहवें अङ्कतकके

निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची

(विशेषाङ्कको विषय-सूची उसके आरम्भमें देखनी चाहिये, वह इसमें सम्मिलित नहीं है।) निबन्ध-सूची विषय पृष्ठ-संख्या विषय १- अनन्य प्रेम और परम श्रद्धा (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०६-पृ०७ २- अनन्य शरणागति (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी) सं०१२-पृ०२४ ३- अमरूद का पेड़ [कहानी] (श्रीहरिप्रकाशजी राठी)..... सं०४-पृ०३२ ४- अमृत-कण (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय २५- गंगाघाट [प्रेरक-कथा] श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०१०-पृ०९ ५- अमृत-वचन [संत-वाणी] २६- गायकी प्रत्यक्ष विशेषता [प्रेषक—डॉ० श्रीओमप्रकाशजी वर्मा] सं०६-पृ०३८ ६- अर्थ और रहस्यका भेद (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०१२-पृ०७ ७- 'आचार: परमो धर्म:'..... सं०६-पु०४९ २८- गोभक्त रामसिंह (मुखिया श्रीविद्यासागरजी)...... सं०५-पृ०४१ ८- आत्मसम्मानके आगे कुछ भी नहीं [महारानी पद्मिनीकी शौर्यकथा] (श्रीसौजन्यजी गोयल) सं०३-पृ०२५ ९- आध्यात्मिक जीवनकी सफलताका उपाय (ब्रह्मलीन परमहंस स्वामी श्रीदयानन्द 'गिरि' जी महाराज) ३२- गोस्वामीजीका काशीप्रवास [प्रेषक—प्रो० श्रीज्ञानचन्दजी गर्ग]..... सं०७-पृ०१५ १०- आध्यात्मिक धनकी श्रेष्ठता (पं० श्रीजयकान्तजी झा) सं०९-पृ०११ ३४- चार पुरुषार्थ (डॉ० श्रीकृष्णजी द० देशमुख) ११- आरोग्य-सूत्र..... सं०९-प०३३ १२- आस्था-श्रद्धा-विश्वास (ब्रह्मलीन श्रद्धेय वाल्वेकर] सं०२-पृ०३४, सं०३-पृ०२७ स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ३५- जगत्का स्वरूप (नित्यलीलालीन श्रद्धेय [प्रस्तुति—साधन-सूत्र : श्रीहरिमोहनजी]सं०४-पृ०३९ १३- ईश्वर-प्राप्तिके लिये गृहत्याग आवश्यक नहीं ३६- जीवदयाका सुपरिणाम [प्रेरक कथा] (डॉ० श्री ओ०पी० गुप्ता) सं०६-पृ०२४ (महात्मा तैलंग स्वामी)..... सं०४-पृ०२८ १४- ईश्वरमें विश्वास (श्रीलक्ष्मणस्वरूपजी माहेश्वरी, एम०ए०, ३७- जीवन कैसे जिया जाय? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणा-नन्दजी महाराज) [साधन-सूत्र-श्रीहरिमोहनजी] सं०७-१६ एल०एल०बी०) सं०१०-पृ०२९ १५- एक प्रसिद्ध महात्माके उद्गार सं०१०-पृ०८ ३८- जीवन-दर्शन सं०५-पृ०१८ १६- कर्मयोगका शाश्वत रहस्य (डॉ० सुश्री नीलमजी) . सं०४-पृ०२७

२३- कपानुभृति सं०२-पृ०४६, सं०३-पृ०४६, सं०४-पृ०४६, सं०५-पृ०४६, सं०६-पु०४४, सं०७-पु०४५, सं०८-पु०४६, सं०९-पु०४६, सं०१०-

पृष्ठ-संख्या

पृ०४१, सं०११-पृ०४५, सं०१२-पृ०४२

२४- क्या ईश्वर-साक्षात्कार भी एक वैज्ञानिक सत्य नहीं ?

(पं० श्रीधर्मदेवजी शास्त्री, दर्शनकेसरी, पंचतीर्थ). सं०१२-पृ०११

(डॉ० श्रीमती राधिकाजी लढ़ा)...... सं०४-पृ०२५

(पं० श्रीगंगाधरजी पाठक 'मैथिल') सं०४-पृ०४१

२७- गायके दूध, घी, मक्खन, दही, मट्ठेकी महिमा अपार

[संकलनकर्ता—श्रीप्रशान्तजी अग्रवाल]..... सं०८-४१

२९- गोमाताकी संवेदनशीलता सं०६-पृ०३९

३०- गोविन्द (श्रीरामस्वरूपदासजी पाण्डेय) सं०१०-पृ०३६

३१- गो-सेवासे सन्तान-प्राप्ति सं०११-पृ०४०

(डॉ० श्रीगौरीशंकरजी गुप्त)..... सं०७-पृ०२२

३३- घुने हुए बीजोंकी कहानी (श्रीरामनाथजी 'सुमन') .. सं०५-पृ०१६

[अनुवाद—श्रीमिलिन्दजी काले] [प्रेषिका—श्रीमती मुक्ता

भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०११-पृ०१३

३९- जीवनमें अशान्ति क्यों ? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी

१७- कल्याण— ... सं०२-पु०५, सं०३-पु०५, सं०४-पु०५, सं०५-पु०५, महाराज)[प्रस्तुति—साधन-सूत्र: श्रीहरिमोहनजी] ... सं०६-३६

४०- जीवनोपयोगी बातें [संतवाणी]

[प्रस्तुति—डॉ० श्रीओमप्रकाशजी वर्मा] सं०२-पृ०४२

४१- 'ढाई आखर प्रेमका' (श्रीमती आशाजी गुप्ता) सं०१०-पृ०२५ विशेषाङ्क 'श्रीशिवमहापुराणाङ्क' (उत्तरार्ध) सं०७-पृ०५०

४२- तक्र-माहात्म्य सं०८-पृ०४२ ४३- तनावरहित जीवन जीनेकी कला

२०- कालिय-उद्धार [आवरणचित्र-परिचय] सं०३-पृ०६ (संत श्रीहरिजी महाराज) सं०१०-पृ०३५

४४- तीर्थयात्रा [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') सं०२-पृ०३२ २१- काशीके कुछ शिवलिंग ४५ - त्यागका स्वरूप और साधन (नित्यलीलालीन (श्रद्धेय पं० श्रीलालबिहारीजी मिश्र) सं०२-पृ०२२

श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)...... सं०४-पृ०१२

२२- काशीमें गंगालाभसे मुक्ति (श्रीसत्यजी ठाकुर) सं०२-प्०२६

१९- काकभुशुण्डिपर कृपा [आवरणचित्र-परिचय]...... सं०४-पृ०६

सं०६- पृ०५, सं०७-पृ०५, सं०८-पृ०५, सं०९-पृ०५, सं०१०-पृ०५,

१८- कल्याणका आगामी ९२वें वर्ष (सन् २०१८ ई०)-का

सं०११-पृ०५, सं०१२-पृ०५

विषय

७६- प्रेमी भक्त श्यामानन्द [सन्त-चरित]

७७- 'फागुन लाग्यो सखी जब तें…'

८०- 'बिनु हरिभजन न जाहिं कलेसा'

(श्रीराधाकृष्णजी) सं०९-पृ०३७

(श्रीअर्जुनलालजी बन्सल)..... सं०३-पृ०२३

[प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता]..... सं०१०-पृ०१२

[संत-वाणी] [प्रेषक—श्रीसंकठासिंहजी] सं०५-पृ०३४

७८- 'बंदर्उँ नाम राम रघुबर को'..... सं०८-पृ०१६ ७९- बाबा गम्भीरनाथजीके वचनामृत...... सं०७-पृ०३८

(मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय)

८१- ब्रह्मलीन योगिराज श्रीदेवराहा बाबाजीके उपदेश

पृष्ठ-संख्या

पृष्ठ-संख्या

विषय

४६ - दीर्घायुष्य एवं मोक्षके हेतुभूत भगवान् शंकरकी

४७- दीवाली (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी

४८- दु:खनाशके अमोघ उपाय (नित्यलीलालीन

५१- द्वादश ज्योतिर्लिगोंके अर्चा-विग्रह [ज्योतिर्लिग-

आराधना सं०४-पृ०२४

श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)..... सं०१०-पृ०१४

श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)...... सं०७-१२ ४९- दु:ख है क्या? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

[प्रस्तुति—साधन-सूत्र : श्रीहरिमोहनजी] सं०५-पृ०४० ५०- दुर्व्यवहारसे दुर्गति सं०४-पृ०११

परिचय]-सं०२-पृ०३०, सं०३-पृ०३२, सं०४-पृ०३१, सं०५-पृ०३५,

सं०६-पृ०२६, सं०७-पृ०२७, सं०८-पृ०३५, सं०९-पृ०३४	८२– भक्तको दुःख नहीं होता
५२- धर्मकार्यमें प्रमाद उचित नहीं [वैदिक आख्यान]	(संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल) सं०५-पृ०१७
(श्रीअमरनाथजी शुक्ल) सं०११-पृ०२०	८३- भक्त राजा इन्द्रद्युम्न [आवरणचित्र-परिचय] सं०७-पृ०६
५३- नाग महाशयकी जीव-दया सं०६-पृ०३५	८४- भक्त रामनारायण [भक्तगाथा] सं०-२-पृ०२७
५४- नाथपरम्पराके सिद्धसंत योगिराज गम्भीरनाथ	८५- भक्ति-साधनाका लोकमंगल पक्ष
[संतचरित] (श्रीरामलालजी श्रीवास्तव) सं०७-पृ०३२	(स्वामी श्रीरामराज्यम्जी) सं०३-पृ०२०
५५- नाम-सिद्धि [बोधकथा]	८६- भगवती महाकाली [आवरणचित्र-परिचय] सं०११-पृ०६
(श्रीमहावीरसिंहजी 'यदुवंशी') सं०९-पृ०२९	८७- भगवदाश्रयसे लोक-परलोकका कल्याण
५६- नामानुरागी संत श्रीउड़ियाबाबाजी सं०८-पृ०३२	(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०७-पृ०७
५७- 'नारायण'-नाम-स्मरणके सम्बन्धमें महामना	८८- भगवान्के अनन्य भक्तोंकी अभिलाषा
मालवीयजीका अनुभव (श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार). सं०४-पृ०४०	(पं० श्रीकिशनजी महाराज 'कृष्णानन्दोपाध्याय') सं०८-पृ०२८
५८- निखारिये अपने व्यक्तित्वको	८९- भगवान् शंकरकी गोभिक्त सं०२-पृ०४०
(श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी) सं०७-पृ०२५	९०- भगवान् [ं] श्रीहरिहर [आवरणचित्र-परिचय] सं०-२-पृ०६
५९- निष्कामभावकी महत्ता	९१– भजनमें एक बड़ी बाधा (नित्यलीलालीन श्रद्धेय
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०८-पृ०७	भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०३-पृ०१३
६०- पगली [कहानी] (पं० श्रीकृष्णानन्दजी अग्निहोत्री) सं०८-पृ०२३	९२- भरतका देवपूजन (श्रीब्रह्मेश भटनागर एम० ए०) . सं०११-पृ०११
६१- पगली माई [कहानी] (श्रीसुंदर्शनसिंहजी 'चक्र'). सं०१२-पृ०२१	९३- भला पड़ोसी कौन?—एक शोध
६२- पढ़ो, समझो और करो सं०२-पृ०४७, सं०३-पृ०४७,	(पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) सं०५-पृ०१०
सं०४-पृ०४७, सं०५-पृ०४७, सं०६- पृ०४५, सं०७-पृ०४६, सं०८-	९४- भारतमें गायका महत्त्व (श्रीरामलालजी गुप्त) सं०७-पृ०३९
पृ०४७, सं०९-पृ०४७, सं०१०-पृ०४२, सं०११-पृ०४६, सं०१२-पृ०४३	९५- भोग—भोग्य या भोक्ता (श्रीरामदेवसिंहजी शर्मा) सं०११-पृ०२८
६३- परदोष-दर्शन—घाटेका सौदा	९६ - मंगलमयी [कहानी] (श्रीरामनाथजी 'सुमन') सं०९-पृ०२२
(पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) सं०३-पृ०१०	९७– मंगलमयी गोमाताकी सेवा परम कल्याणकारी है (गोलोक–
६४- परमात्माके साथ है हमारा नित्य सम्बन्ध	वासी जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठधीश्वर श्रीराधा
(श्रीताराचन्दजी आहूजा) सं०५-पृ०२५	सर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी' महाराज) सं०१२-पृ०३७
६५- परमार्थ-साधनके आँठ विघ्न (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी	९८- मन्दिरका मान [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')सं०३-पृ०३६
श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०२-पृ०११	९९- मकरी अप्सराका उद्धार [आवरणचित्र-परिचय] सं०५-पृ०६
६६- परिवार-समृद्धिकरण (श्रीकरणसिंहजी चौहान) सं०४-पृ०२९	१००– 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः'
६७- पुण्य-कार्य कलपर मत टालो [प्रेरक प्रसंग] सं०६-पृ०२३	(विद्यावाचस्पति डॉ० श्रीदिनेशचन्द्रजी उपाध्याय) सं०९-पृ०२६
६८- 'पुण्य' शब्दकी अर्थव्यापकता (साहित्यवाचस्पति श्रीयुत	१०१ – मनन करने योग्य सं०२ – पृ०५०, सं०३ – पृ०५०, सं०४ – पृ०५०,
डॉ० श्रीरंजनजी सूरिदेव, एम०ए०, पी-एच०डी०) सं०६-पृ०२२	सं०५-पृ०५०, सं०६-पृ०४८, सं०७-पृ०४९, सं०८-पृ०५०, सं०९-
६९- पूज्या गोमाता (श्रीरामस्वरूपदासजी पाण्डेय) सं०३-पृ०४१	पृ०५०, सं०१०-पृ०४५, सं०११-पृ०४९, सं०१२-पृ०४६
७०- 'प्रणव'की उपासना (डॉ० श्री के०डी० शर्माजी) सं०१२-पृ०२९	१०२– मनुष्य जन्मकी सार्थकता (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी
७१- प्रथमपूज्य गणेशजी [आवरणचित्र-परिचय]सं०९-पृ०६	महाराज)[प्रस्तुति—साधन-सूत्रः श्रीहरिमोहनजी] सं०२-पृ०३८
७२- प्रभुकी पूर्वनियोजित लीला—'रामवनवास'	१०३– मनुष्य स्वयं ही रोग और मृत्युका मूल कारण
(डा० श्रीरमेश मंगल वाजपेयीजी) सं०७-पृ०२०	(डॉ० श्री जी० डी० बारचे)सं०९-पृ०३०
७३ – प्रसन्नता (पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल,	१०४- महर्षि वसिष्ठ—इक्ष्वाकुवंशके कुलगुरु [रामकथा]
एम०ए०, बी०टी०)सं०१२-पृ०१६	(श्रीसुदर्शन सिंहजी 'चक्र') सं०६-पृ०२९
७४- प्रारब्ध और कर्मस्वातन्त्र्य (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र').सं०८-पृ०२९	१०५- महर्षि वसिष्ठजीको नमस्कार सं०६-पृ०३२
७५- प्रेमका पंथ निराला (पं० श्रीबाल्मीकिप्रसादजी मिश्र,	१०६ - महान् वैज्ञानिककी विनम्रता सं०३ - पृ०१६
एम०ए०, एम०एड०)सं०८-पृ०२६	१०७- महाभारतोक्त शतरुद्रियस्तोत्र सं०५-पृ०२१

१०८- मान-बड़ाई—मीठा विष? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)...... सं०९-पृ०१३ (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज). सं०३-पृ०१२ (श्रीशंकरलालजी माहेश्वरी)..... सं०११-पृ०२६ (श्रीसुभाषचन्द्रजी बग्गा) सं०११-पृ०३०, सं०१२-पृ०३३ ११२- मामा प्रयागदासजी [संत-चरित] सं०५-पृ०३७

[88]

विषय

१२९ - शहजादी जेबुन्निसापर सरस्वतीदेवीकी कृपा [ऐतिहासिक

१३२- शिव-तत्त्व (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी

१३४- शिवसे शिक्षा (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी

१३०- शाश्वत साधन-सुधा [संत-वाणी]

१३३- शिवयोगी संत तिरुमूलर [संत-चरित]

१३७- श्रीअयोध्यापुरीमें दीपमालिकोत्सव

१३८- श्रीकालभैरवाष्टकम् ३२

१४१ - श्रीभैरव एवं उनकी उपासना

१४३ - श्रीरामकृष्ण परमहंस [संत-चरित]

१४६ - संत नागा निरंकारी [संत-चरित]

कहानी] (श्रीअशोककुमारजी चटर्जी)...... सं०३-पृ०३१

[प्रस्तुति—आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा]...... सं०४-पृ०४४

गोयन्दका) . सं०२-पृ०७, सं०३-पृ०७, सं०४-पृ०७, सं०५-पृ०७

(श्रीरामलालजी) सं०३-पृ०३३

महाराज) सं०२-पृ०९

[आवरणचित्र-परिचय] सं०१०-पृ०६

(पं० श्रीसुरेशचन्द्रजी ठाकुर) सं०१२-पृ०३१

(स्वामी श्रीअभेदानन्दजी, पी-एच०डी०) सं०१२-पृ०३५

साहित्याचार्य) सं०८-पृ०११

(श्रीरामलालजी श्रीवास्तव) सं०११-पृ०३५ १४७- संसार-वृक्ष [आवरणचित्र-परिचय] सं०१२-पृ०६

सन्त श्रीरामचन्द्र केशव डोंगरेजी महाराज) सं०४-पृ०१८

१३५ - श्रद्धा-सुमन सं०४ - पृ०५० १३६- श्राद्ध-तत्त्व-प्रश्नोत्तरी (श्रीराजेन्द्रकुमारजी धवन) सं०९-पृ०३६

१३९- श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना...... सं०१०-पृ०४६

१४० - श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना सं०१०-पृ०४९

१४२- श्रीमती आण्डाल (गोदाम्बा) [आवरणचित्र-परिचय]. सं०६-पृ०६

१४४- श्रीशिवस्क्तिः [श्रीपूर्णचन्द्रकृत उद्भटसागर] सं०२-पृ०२९

१४५ - संगका फल (पं० श्रीबलदेवजी उपाध्याय, एम०ए०,

१३१ - शिव और सती (श्रीजयरामदासजी 'दीन' रामायणी) . सं०२-पृ०१५

पृष्ठ-संख्या

११३- मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई (श्रीइन्दरचन्दजी तिवारी) सं०१२-पृ०१८ ११४- मोह-महिमा (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)..... सं०६-पृ०११ श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)..... सं०५-पृ०१४

११५ - मौन-व्याख्यान (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी ११६ - मृत्यु क्या है ? (श्रीरणवीरजी शास्त्री) [प्रेषक—श्रीनीरजकुमारजी वैश्य] सं०५-पृ०३२

विषय

१०९-मानवकी माँग

११०- मानवीय मूल्योंकी शिक्षा

१११- मानसमें वर्णित उत्कृष्ट श्रीराम-प्रेमी

११७- योगावतार लाहिड़ी महाशय [संत-चरित] (आचार्य श्रीप्रतापादित्यजी एम०ए०, एल-एल०बी०)...... सं०४-पृ०३५ ११८- रघुकुलपर कामधेनुनन्दिनीकी अनुकम्पा

(श्रीजगदीशप्रसादजी गुप्त)......सं०९-पृ०४१ ११९-राजा चक्कवेणके त्यागका प्रभाव (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) . सं०११-पृ०७

१२०-रामकथाके अमरत्वका रहस्य (श्रीसुरेशचन्द्रजी) सं०११-पृ०२४ (डॉ० श्रीमती नीरूजी रस्तोगी)..... सं०१२-पृ०२७

१२१- 'रास रच्यौ बन कुँवर-किसोरी' १२२- लक्ष्मीजीकी स्थिरताके उपाय (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी

उपाध्याय) [प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता]...... सं०४-पृ०१६ १२३ - वाल्मीकिरामायण, सुन्दरकाण्डके सकाम पाठकी विधि सं०४ - पृ०१५ १२४- विजय निश्चित है (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)......सं०१२-पृ०१३

१२५ - वृन्दाका हृदय ही वृन्दावन (ब्रह्मलीन सन्त स्वामी श्रीगंगानन्दजी भारती)[प्रेषक—श्रीअनिलजी सक्सेना] सं०४-पृ०१०

१२६- 'वृन्दावन वास पाइबे कौ बुलउआ' (डॉ० श्रीराजेशजी शर्मा)...... सं०११-पृ०२१ १२७- व्रतोत्सव-पर्व-

[चैत्रमासके व्रतपर्व] सं०२-पृ०४५,

[वैशाखमासके व्रतपर्व]..... सं०३-पृ०४५, [ज्येष्ठमासके व्रतपर्व] सं०४-पृ०४५, [आषाढ्मासके व्रतपर्व] सं०५-पृ०४५,

[श्रावणमासके व्रत-पर्व] सं०७-पृ०४४,

१२८- शरीरका रक्षातन्त्र (श्रीगणेशदत्तजी दुबे)

[भाद्रपदमासके व्रतपर्व] सं०८-पृ०४३,

[आश्विनमासके व्रत-पर्व]..... सं०९-पृ०४३,

[कार्तिकमासके व्रत-पर्व]..... सं०१०-पृ०४०,

[मार्गशीर्षमासके व्रतपर्व] सं०११-पृ०४३, [पौषमासके व्रतपर्व] सं०११-पृ०४४

[माघमासके व्रतपर्व] सं०१२-पृ०४०

[फाल्गुनमासके व्रतपर्व]..... सं०१२-पृ०४१

[प्रेषक—डॉ० श्रीकेशरीनारायणजी त्रिपाठी] सं०२-पृ०१०

१५३- सत्संगका प्रभाव (श्रीभागवतप्रसादजी पाण्डेय) सं०७-पृ०११ १५४- सत्संगकी महिमा सं०३-पृ०१९

१५०- सचाईका पुरस्कार

(पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल, एम०ए०, बी०टी०) सं०११-पृ०१६ १५१- सच्चा भक्त [प्रेरक-प्रसंग]

१५६- सन्तप्रवर श्रीभरतजी—श्रीहनुमान्जीकी दृष्टिमें

१५७- सन्तवाणी (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी

१५९- सर्वत्र भगवद्दर्शन और व्यवहार (नित्यलीलालीन

१५८- समयका सदुपयोग (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी

१४८- संस्कार-बीज (गोलोकवासी परम भागवत

१४९ - संस्कृति और स्वेच्छाचार (श्रीप्रेमाचार्यजी शास्त्री, शास्त्रार्थपंचानन) सं०११-पृ०२९

१५५- सन्त नाग महाशय [संत-चरित]..... सं०६-पृ०३३

(श्रीजगदीशप्रसादजी गुप्त)..... सं०४-पृ०२२

महाराज)..... सं०८-पृ०३४, सं०९-पृ०४०, सं०१०-पृ०३१

गोयन्दका) सं०९-पृ०७

श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)...... सं०६-पृ०१३ १६०- समर्थ गुरु रामदास स्वामी [संत-चरित] सं०१०-पृ०३२

(श्रीशिवकुमारजी गोयल) सं०१०-पृ०११ १५२- सत्यका स्वरूप (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामिकंकरजी महाराज)

[प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता] सं०७-पृ०९

पृष्ठ-संख्या

<u> </u>	विषय पृष्ठ-संख्या
१६१- समुद्र-गर्जन (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल) सं०३-पृ०१५	[बोधकथा] सं०११-पृ०५०
१६२ - सर्वश्रेष्ठ शासक [प्रेरक प्रसंग] सं०६ - पृ०२५	१७१- सारथि (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी जैन) सं०१०-पृ०२६
१६३- सर्वार्थसाधक भगवन्नाम (नित्यलीलालीन श्रद्धेय	१७२- सावधान रहनेकी आवश्यकता सं०१०-पृ०७
	१७३- सिन्धके कृष्णभक्त हिन्दी कवि
१६४- सहनशक्ति बढ़ाइये (श्रीअगरचन्दजी नाहटा) सं०१०-पृ०१६	•
	(श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') सं०५-पृ०२८
१७०- साधुक ।लय स्त्रा-दशन हा सबस बड़ा पाप	(श्राकृष्णदत्तजा भट्ट)स०८-पृ०१७, स०९-पृ०१५
समुद्र-गर्जन (संत श्रीभूगेक्दनाथजी सान्याल) सं03-पृ0१६ २ समुद्र-गर्जन (संत श्रीभूगेक्दनाथजी सान्याल) सं05-पृ0१६ २ सार्वाधियाक प्राप्त प्राप्ता (संविद्याणिक) अर्डेय भाईजी श्रीहरमुमप्रसाद पोद्यार) सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्मप्रसाद पोद्यार) सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्मप्रसाद पोद्यार) सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्मप्रसाद पोद्यार) सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्मप्रमाद श्रीकृष्णका वेणुवादन (आवादणांच्च्यम्मप्रसाद पोद्यार) सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्मप्रसाद पोद्यार) सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्मप्रसाद पोद्यार) सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्मप्रसाद श्रीकृष्णका वेणुवादन (आवाद व्याध्याप विद्यार प्रमुच्यम्भ आवादम्भ स्वयम्भ सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्मप्रसाद पोद्यार) सं04-पृ0१६ २ संपत्र प्रमुच्यम्भ स्वयम्भ स्वयम्भ स्वयम्भ संवद्यार (सं04-पृ0१६ २ सार्वाधा प्रमुच्यम्भ स्वयम्भ	
संकलित	⊢सामग्री
१ – 'को जाँचिये संभ तजि आन' सं०५ – प०२४	९ – महिषासरमर्दिनी कमलासना भगवती महालक्ष्मीका
४- 'जय दर्गे दर्गतिनाशिनि जय' सं०१०-प०३	
५- 'झलावित स्यामा स्याम-कमार' सं०७-प०३	
	१३- श्रीमत्यञ्जयशिव-ध्यान सं०२-प०३
८- 'दै री मैया दोहनी, दुहिहोंं में गैया' सं०९-पृ०३	
	···
पद्य-	सूची
१- अर्चन (श्रीमती डॉ० उर्मिला किशोरजी)सं०५-पृ०३९	४० - तीन प्रहरका यह जीवन [कविता]
२- कोटि-कोटि नाम तेरे	(श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव) सं०११-पृ०१५
(श्रीमती डॉ॰ उर्मिलाजी किशोर) सं०७-पृ०२६	
३ – गजानन–स्तुति	१२- नारी! (श्रीगयाप्रसादंजी द्विवेदी 'प्रसाद') सं०९-पृ०२५
(डॉ० श्रीसत्यप्रकाशजी 'बृजेश किंकर') सं०२-पृ०१४	
४- गजेन्द्रकृत श्रीहरि-स्तुति (श्रीरामेश्वरजी पाटीदार)	१४- 'विश्वनाथ! तेरी जय हो!' (श्रीयुत डॉ० श्रीरंजन सूरिदेवजी,
	एम० ए०, पी-एच० डी०)ं सं०३-पृ०४०
५ – 'गोमाता है विश्व की माता'	१५- 'राम राम जिपये'
(पं० श्रीकृष्णजी शर्मा) सं०३-प०४२	(श्रीओमप्रकाशजी अग्निहोत्री 'सुबोध')सं०५-पृ०३१
६ – गोवध बंद हो	
(डॉ० श्रीगणेशदत्तजी सारस्वत)सं०७-पृ०४१	१७- शिवसे विनय [ं] (श्रीचन्द्रशेखरजी शुक्ल)
७- चेतावनी (पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज)	
८- जग-जीव सभी रामाश्रित हैं	
९- 'ज्योति बुझने न पाये'	
רוווועמוסות ספועפו חונףs.//asc.gg/an	anna IVIADE WITH LOVE DI AVINASN/SNA

गीताप्रेस,गोरखपुरसे प्रकाशित—भगवान्के विभिन्न स्वरूपोंके महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

								1
कोड	पुस्तक-नाम	मू०₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू०₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू०₹
	भगवान् श्रीगणपति		819	श्रीविष्णुसहस्त्रनामस्तोत्रम् (शांकरभाष्य)	३०		— भगवान् श्रीराम —	
657	97	१७०	1801	" (हिन्दी-अनुवादसहित)	१०	574	योगवासिष्ठ	१८०
2024	श्रीगणेशस्तोत्ररत्नाकर	४०	225	गजेन्द्रमोक्ष	४	103	मानस-रहस्य, सजिल्द	६०
	— भगवान् श <mark>िव</mark> —		229	श्रीनारायणकवच	४	231	रामरक्षास्तोत्र	8
1468	सं० शिवपुराण (विशिष्ट सं०)	२५०	1367	श्रीसत्यनारायण-व्रतकथा	१५		— श्रीहनुमान्जी —	
	(अच्छी क्वालिटीके मोटे कागजपर)			<mark>– भगवान् श्रीकृष्ण –</mark>		42	हनुमान-अङ्क-परिशिष्टसहित	१५०
789	सं० शिवपुराण	200	571	श्रीकृष्णलीला-चिन्तन	१५०	185	भक्तराज हनुमान्	१०
1985	लिंगमहापुराण-सटीक	220	517	गर्ग-संहिता	१५०	112	हनुमान-बाहुक	4
2020	शिवमहापुराणमूलमात्रम्	२७५	1927	जीवन-संजीवनी	४५		– महाशक्ति भगवती –	
1417	शिवस्तोत्ररत्नाकर	३५	555	श्रीकृष्णमाधुरी	३५	1897	श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण-सटीक	800
1627	रुद्राष्ट्राध्यायी (सानुवाद)	३०	62	श्रीकृष्णबालमाधुरी	३५	1898	दो खण्डोंमें सेट	
1954	शिव-स्मरण	१०	547	विरह-पदावली	30	1133	सं० देवीभागवत	२६५
	शिवमहिम्नः स्तोत्र	4	864	अनुराग-पदावली	४०	41	97	200
228	शिवचालीसा (लघु आकारमें भी)	8	49	श्रीराधा-माधव-चिन्तन	९०	1774	श्रीदेवीस्तोत्ररत्नाकर	80
230	अमोघ शिवकवच	8	50	पद-रत्नाकर	११०	2003	शक्तिपीठदर्शन	20
	— भगवान् विष्णु —		1862	श्रीगोपालसहस्त्रनामस्तोत्र			— भगवान् सूर्य —	
48	श्रीविष्णुपुराण (सटीक)			(हिन्दी-अनुवाद)	१७		सूर्याङ्क	१३०
1364	" (केवल हिन्दी)	१००	1748	संतानगोपालस्तोत्र	6	211	आदित्यहृदयस्तोत्र	8

माघ-मेला प्रयाग (सन् २०१८)

श्रद्धालुओंको चाहिये कि पौष शुक्ल पूर्णिमा (२ जनवरी, २०१८ ई०)-से माघ शुक्ल पूर्णिमा (३१ जनवरी, २०१८ ई०)-तक पूरे एक मासतक कल्पवासी बनकर प्रयागमें रहें और श्रद्धा-भक्तिपूर्वक नित्यप्रति पुण्यतोया त्रिवेणीमें स्नान-लाभ करते हुए धर्मानुष्ठान, सत्सङ्ग तथा दान-पुण्य करें—

१-पौष शुक्ल १५, मंगलवार (२ जनवरी, २०१८ ई०) माघस्नानारम्भ। २-माघ कृष्ण १४, सोमवार (१५ जनवरी, २०१८ ई०) मकर-संक्रान्ति

र-माध कृष्ण १४,	सामवार	(१५ जनवरा, २०१८ इ०)	मकर-सक्राान्त।
३-माघ कृष्ण ३०,	मंगलवार	(१६ जनवरी, २०१८ ई०)	मौनी अमावस्या।
४-माघ शुक्ल ५,	सोमवार	(२२ जनवरी, २०१८ ई०)	वसन्तपंचमी।
५-माघ शुक्ल १५,	बुधवार	(३१ जनवरी, २०१८ ई०)	माघी पूर्णिमा।

माघ-मेला प्रयाग क्षेत्रमें विशेष पुस्तक-स्टॉल लगानेका विचार है।

गीता-दैनन्दिनी (सन् २०१८) अब उपलब्ध-मँगवानेमें शीघ्रता करें।

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहूर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलदार पृष्ठ आदि। पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 1431)—दैनिक पाठके लिये गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद, मूल्य ₹७५ बॅगला (कोड 1489), ओड़िआ (कोड 1644), तेलुगु (कोड 1714) प्रत्येकका मूल्य ₹७५

पुस्तकाकार— सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)—गीताके मूल श्लोक एवं सूक्तियाँ मूल्य ₹६० पॉकेट साइज— सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 506)— गीता-मूल श्लोक, मूल्य ₹३५

<mark>लघु आकार— सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड</mark> 1769)— विशेष प्रकारके पतले पेपरपर मूल्य ₹२०



रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७ पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2017-2019

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR-03/2017-2019

जनवरी २०१८ (कल्याण वर्ष ९२)-का विशेषाङ्क-

'श्रीशिवमहापुराणाङ्क' (उत्तरार्ध), [हिन्दीभाषानुवाद—श्लोकाङ्कसहित]

महापुराण संख्यामें अठारह हैं। इनमें शिवपुराणका विशेष माहात्म्य है। पिछले वर्ष कल्याणके विशेषाङ्कके रूपमें श्रीशिवमहापुराणका पूर्वार्ध प्रकाशित किया गया था जिसकी पाठक महानुभावोंने बहुत प्रशंसा की। इस वर्ष प्रकाशित होनेवाले उत्तरार्धमें मानवजीवनके परम कल्याणकी अनेक उपयोगी बातें निरूपित हैं। शिवज्ञान, शैवीदीक्षा तथा शैवागमका यह अत्यन्त प्रौढ़ ग्रन्थ है। साधना एवं उपासना-सम्बन्धी अनेकानेक सरल विधियाँ इसमें उल्लिखित हैं। इसकी कथाएँ अत्यन्त मनोरम, रोचक तथा बड़े ही कामकी हैं। मुख्यरूपसे इस अंकमें भगवान् शिवके लीलावतारोंकी कथाएँ, द्वादश ज्योतिर्लिगों-उपलिङ्गोंके आख्यान, शिवरात्रि, पाशुपत आदि व्रतोंकी कथाएँ, शिवभक्तोंके रोचक आख्यान, अर्धनारीश्वरस्तोत्र एवं पञ्चाक्षर मंत्र आदिका माहात्म्य विस्तारसे वर्णित है। यह उच्चकोटिके सिद्धों, आत्मकल्याणकामी साधकों तथा साधारण आस्तिकजनों—सभीके लिये परम मंगलमय एवं हितकारी है।

वार्षिक शुल्क सजिल्द ₹२५०, पञ्चवर्षीय शुल्क सजिल्द ₹१२५० अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर नि:शुल्क पढ़ें।

नवीन प्रकाशन—छपकर तैयार

प्रेमके वशमें भगवान् (कोड 2117)—प्रस्तुत पुस्तकमें श्रीजयदयालजी गोयन्दकाद्वारा लगभग ७०-७५ वर्ष पूर्व दिये गये प्रवचन तथा उनके अंतरंग सत्संगियोंसे हुए पत्राचारको संकलित किया गया है। इसमें साधारण-से-साधारण व्यक्तिके लिये साधनमें लानेयोग्य बहुत-से साधन बतलाये गये हैं जिनसे पापी-से-पापी व्यक्ति भी अपना कल्याण कर सकते हैं। मुल्य ₹१५

सरल गीता (कोड 2099)—गीताजीका सही उच्चारण सीखनेवाले पाठकोंको ध्यानमें रखकर उक्त गीताका प्रकाशन किया गया है। इसमें प्रत्येक चरणके कठिन शब्दोंको सामासिक चिह्नोंसे अलग करके दो रंगोंमें छापा गया है। इससे श्लोकोंके उच्चारणमें सहायता मिल सकती है। मूल्य ₹३५

कोड	पुस्तक-नाम	नेपाली मूल्य रु.	मूल्य ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹
2094	गीता-माधुर्य (नेपाली)	२५	१५	2091	सावित्री और सत्यवान् (बँगला)	ષ
2095	प्रश्नोत्तरमणिमाला (")	३०	१८	2092	नल-दमयन्ती (बँगला)	ξ
2096	उपनिषद्का चौध रत (")	१६	१०	2093	गीता पढ़नेके लाभ (बँगला)	४
2097	विदुरनीति (")	32	२०	2087	सुख-शान्तिपूर्वक जीनेकी कला (बँगला)	१०
2090	भूले न भुलाये (ओड़िआ)	_	22	2089	संक्षिप्त श्रीमार्कण्डेयपुराण (तेलुगु)	१००
2106	श्रीदुर्गासप्तशती (मलयालम)	_	४५			

पुनः छपकर तैयार—माघमास-माहात्म्य (कोड 1588)—इन महीनोंमें भगवान्की प्रीतिके उद्देश्यसे किये जानेवाले पुण्यकर्म अक्षय हो जाते हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें पद्मपुराणमें वर्णित माघमासके माहात्म्यका संकलन किया गया है। मूल्य ₹१०